मध्यप्रदेश/छत्तीसगढ़

RNI No.: MPBIL/2001/05256
DAVP Code : 128101
Postal Registration No. : Bhopal/MP/581/2021-2023

Publish Date : Every Month Dt. 05
Posting Date : Every Month Dt. 15
Rs. 10/-

जगत विज़न

| वर्ष : 26 | अंक : 12 |अगस्त 2026|

सरदार सरोवर बांध

विस्थापितों और प्रदेश के हितों पर कुठाराघात!

प्रेरणा स्त्रोत : स्व. श्री जगत पाठक

निर्भीक पत्रकारिता

संपादक	विजया पाठक
कार्यकारी संपादक	समता पाठक
पश्चिम बंगाल ब्यूरो चीफ	अमित राय

सम्पादकीय एवं विज्ञापन कार्यालय

भोपाल

एफ-116/17, शिवाजी नगर, भोपाल
मो. 98260-64596, मो. 9893014600
फोन : 0755-4299165 म.प्र. स्वत्वाधिकारी,

छत्तीसगढ़

4-विनायका विहार, रिंग रोड, रायपुर

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक

विजया पाठक द्वारा जगत प्रिंटर्स पब्लिशर्स, खसरा नं. 1/1/6 अमरावद खुर्द बरखेड़ा पठानी, फंदा भोपाल से मुद्रित एवं एफ-116/17, शिवाजी नगर, भोपाल म.प्र. से प्रकाशित संपादक विजया पाठक। समस्त विवादों का कार्यक्षेत्र भोपाल सत्र-न्यायालय रहेगा। पत्रिका में प्रकाशित किये जाने वाले संपूर्ण आलेख एवं सामग्री की जिम्मेदारी लेखक एवं संपादक की होगी।

E-mail : jagat.vision@gmail.com
Website: www.jagatvision.co.in

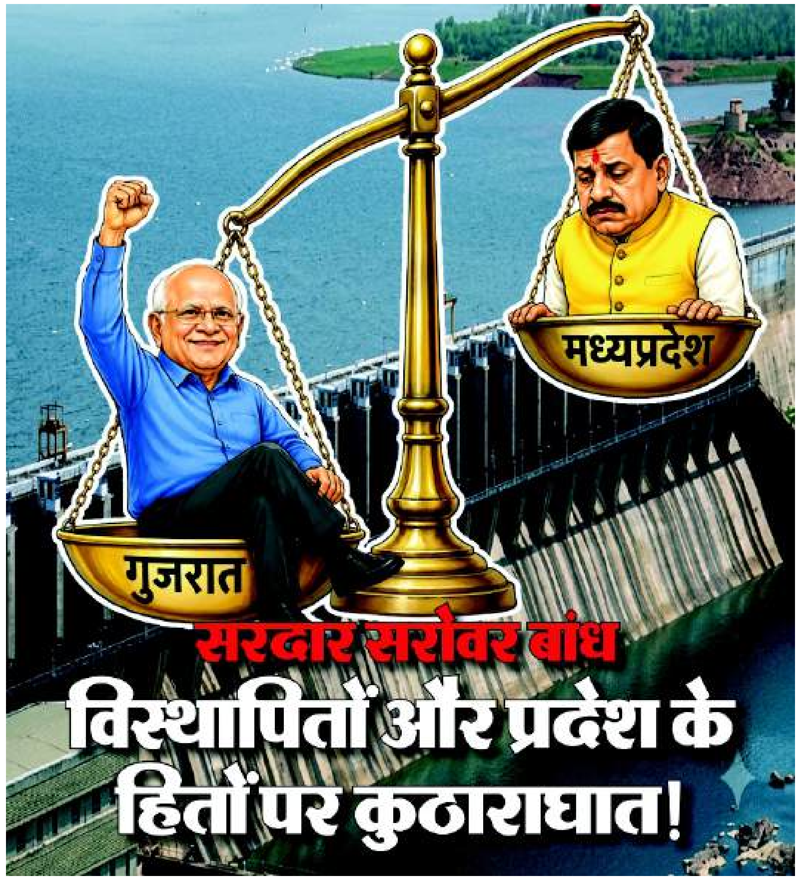

(पृष्ठ क्र.-6)

- लोकतंत्र की असली ताकत जनता 29
- भाजपा के लिए दतिया चुनाव हारने के क्या हैं मायने? 38
- बलूचिस्तान में स्वघोषित आजादी 46
- खनन माफिया और सरकार 49
- राजनीति से आगेः भारत की शिक्षा व्यवस्था का पुनर्निर्माण 52
- नशे के विरुद्ध निर्णायक युद्ध : ड्रग्स माफियाओं पर बढ़ा प्रहार 55
- शासन-प्रशासन के भरोसे ही क्यों? 58
- बालक बलीराम आजाद ने हिला दिया था अंग्रेजी हूकूमत को 60
- Bastar's aspirational Adivasi schoolchildren have few viable futures 62

बहुत लापरवाही से चलाकर पुराने ड्राइवर ने ये हालत कर दी.. आप चलाओ, ताकि मंजिल पर पहुंचे!
विजया :)
छत्तीसगढ़
कांग्रेस
भ्रष्टाचार

मोदी सरकार में आंदोलन : कारण, स्वरूप और प्रभाव

वर्ष 2014 से केंद्र में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में भारतीय जनता पार्टी की सरकार है। इस अवधि में अनेक नीतियों और निर्णयों को लेकर विभिन्न वर्गों द्वारा आंदोलन किए गए। इन आंदोलनों ने भारतीय लोकतंत्र, शासन व्यवस्था और सार्वजनिक विमर्श को प्रभावित किया। भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है। लोकतंत्र की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि नागरिकों को अपनी राय व्यक्त करने, सरकार की नीतियों का समर्थन करने तथा उनका विरोध करने का संवैधानिक अधिकार प्राप्त है। आंदोलन किसी नीति, कानून, प्रशासनिक निर्णय या सामाजिक-आर्थिक समस्या के विरुद्ध अथवा उसके समर्थन में जनता द्वारा किया जाने वाला संगठित प्रयास है। इसका उद्देश्य सरकार का ध्यान किसी मुद्दे की ओर आकर्षित करना, जनमत तैयार करना तथा नीति में परिवर्तन की मांग करना होता है। भारत के स्वतंत्रता संग्राम से लेकर आज तक आंदोलनों ने सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसलिए किसी भी सरकार के विरुद्ध आंदोलन को लोकतांत्रिक प्रक्रिया का हिस्सा माना जाता है। मोदी सरकार में हुए आंदोलनों का स्वरूप और प्रभाव अलग रहा। कई आंदोलनों में सरकार को अपने फैसलों में पीछे हटना पड़ा। हाल ही नीट पेपर लीक मामलों को लेकर जंतर मंतर पर हुआ आंदोलन अलग ही परिभाषा के रूप में देखा जा रहा है। संदेश साफ रहा कि सरकार की विफलता के लिए वह खुद जिम्मेदार है। साल 2020 में केंद्र सरकार ने तीन कृषि कानून लागू किए। इस मुद्दे को लेकर पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश तथा अन्य राज्यों के किसानों ने लंबे समय तक आंदोलन किया। सरकार ने वर्ष 2021 में इन तीनों कृषि कानूनों को वापस लेने की घोषणा की। यह भारतीय लोकतंत्र में आंदोलन और संवाद का एक महत्वपूर्ण उदाहरण माना जाता है। 2019 में नागरिकता संशोधन अधिनियम (CAA) पारित किया गया। विरोध करने वाले समूहों ने आशंका व्यक्त की कि इस कानून और राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर (NRC) के संयुक्त प्रभाव से कुछ नागरिकों के अधिकार प्रभावित हो सकते हैं। कई विश्वविद्यालयों तथा विभिन्न राज्यों में प्रदर्शन हुए। देश में रोजगार के अवसर, प्रतियोगी परीक्षाओं में देरी, रिक्त पदों पर नियुक्ति तथा युवाओं की रोजगार संबंधी चिंताओं को लेकर समय-समय पर प्रदर्शन हुए। अनेक छात्र संगठनों और युवाओं ने भर्ती प्रक्रियाओं में पारदर्शिता, समयबद्ध नियुक्ति तथा रोजगार सृजन की मांग उठाई। ईंधन, रसोई गैस तथा आवश्यक वस्तुओं की बढ़ती कीमतों को लेकर विपक्षी दलों और विभिन्न संगठनों ने कई बार विरोध प्रदर्शन किए। 2022 में सेना भर्ती के लिए अग्निपथ योजना लागू की गई। कई राज्यों में प्रदर्शन हुए, जिनमें कुछ स्थानों पर हिंसक घटनाएँ भी हुईं। इन आंदोलनों का भारतीय राजनीति और समाज पर कई प्रकार का प्रभाव पड़ा। कुछ नीतियों पर व्यापक सार्वजनिक चर्चा हुई। सरकार और विभिन्न संगठनों के बीच संवाद की आवश्यकता बढ़ी। कई मुद्दों पर न्यायालयों में सुनवाई हुई। कृषि कानूनों की वापसी जैसी घटनाएँ लोकतांत्रिक संवाद का उदाहरण बनीं। नागरिकों में संवैधानिक अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति जागरूकता बढ़ी। मोदी सरकार के विरोध में हुए आंदोलन भारतीय लोकतंत्र की सक्रियता का एक महत्वपूर्ण पहलू हैं। इन आंदोलनों के पीछे विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक कारण रहे हैं। जहाँ आंदोलनकारियों ने अपनी चिंताओं और मांगों को सामने रखा, वहीं सरकार ने अपनी नीतियों को विकास और सुधार के दृष्टिकोण से उचित ठहराया। कुछ मामलों में संवाद के माध्यम से समाधान भी निकला, जबकि कुछ विषयों पर मतभेद बने रहे। लोकतंत्र में विपक्ष की जिम्मेदारी केवल सरकार की आलोचना करना नहीं, बल्कि रचनात्मक सुझाव देना भी है। विभिन्न विपक्षी दलों, किसान संगठनों, छात्र समूहों, श्रमिक संघों तथा सामाजिक संगठनों ने अलग-अलग मुद्दों पर सरकार का विरोध किया। लोकतंत्र की सफलता इसी में है कि सरकार जनता की बात सुने, नागरिक अपने अधिकारों का जिम्मेदारी के साथ प्रयोग करें और सभी पक्ष संविधान तथा कानून के दायरे में रहकर संवाद करें। स्वस्थ लोकतंत्र वही है जिसमें समर्थन और विरोध दोनों का सम्मान हो तथा सार्वजनिक नीतियों पर खुली, तथ्यपरक और शांतिपूर्ण चर्चा को प्रोत्साहन मिले।

विजया पाठक

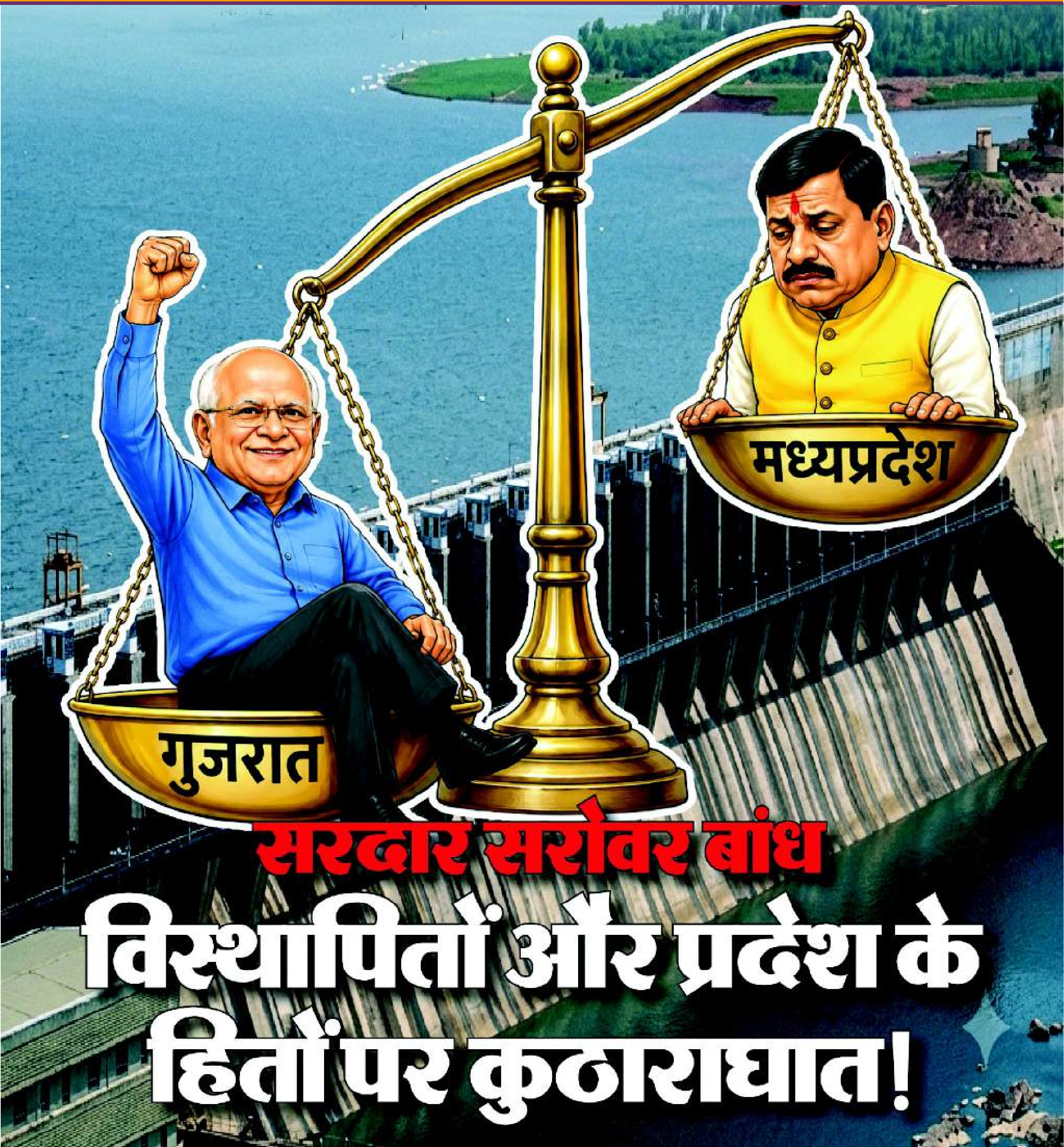

सरदार सरोवर बांध

विस्थापितों और प्रदेश के हितों पर कुठाराघात!

■ विजया पाठक

सरदार सरोवर बांध की साल 1961 में नींव रखी गई थी, 1987 में निर्माण शुरू हुआ और अब 39 साल बाद विवाद खत्म हुआ। यह मामला है मध्य प्रदेश की जीवनरेखा नर्मदा नदी पर बने सरदार सरोवर बांध की। इसे लेकर शुरू हुआ 04 राज्यों (मध्यप्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र और राजस्थान) के बीच का विवाद खत्म होने में पूरे 39 साल लग गए। यह विवाद बांध के निर्माण पर खर्च हुई राशि और बांध के बैक वॉटर में डूबी भूमि और प्रभावित लोगों के मुआवजे को लेकर था। इसमें सबसे ज्यादा प्रभावित मध्य प्रदेश हुआ, जिसकी 42 हजार 533 हेक्टेयर भूमि डूब में चली गई। इससे तकरीबन 192 गांव प्रभावित हुए। कई गांव तो हमेशा-हमेशा के लिए जल मग्न हो गए। 39 साल से चला आ रहा विवाद मध्य प्रदेश को 217 करोड़ रूपए देने की सहमति के साथ खत्म हो गया। बांध बनने से सबसे ज्यादा फायदा गुजरात को हो रहा है और राज्य की हजारों एकड़ जमीन सिंचित हो रही है। साथ ही बहुत बड़े भू-भाग में लोगों को पीने का पानी उपलब्ध हो रहा है। जबकि इसके निर्माण में गुजरात के न तो वन और न ही जमीन डूबी है। इसे बिडंबना ही कहेंगे कि जिस प्रदेश का सबसे ज्यादा नुकसान हुआ उसे ही बांध से सबसे कम लाभ मिल रहा है। साथ ही मुआवजा की राशि भी नहीं मिल रही है। बदकिस्मती से वह राज्य मध्यप्रदेश है। सरदार सरोवर बांध को लेकर हुई हालिया बैठक के बाद मध्यप्रदेश के हितों को लेकर गंभीर सवाल उठने लगे हैं। दावा किया जा रहा है कि मध्यप्रदेश को परियोजना से जुड़े वित्तीय समायोजन में गुजरात से लगभग 7,769 करोड़ रूपये प्राप्त होने चाहिए थे, उसी मध्यप्रदेश पर अब करीब 550 करोड़ रूपये के भुगतान का दायित्व आ गया है। यह राज्य के लिए बड़ा वित्तीय झटका है। सबसे अधिक डूब क्षेत्र और विस्थापन मध्यप्रदेश में होने के बावजूद राज्य ने अपने हितों से समझौता किया। यहां मप्र सरकार ने अपने हितों को दरकिनार करते हुए बैठक में नतमस्तक हो गई। और 7,769 करोड़ का नुकसान करवा लिया। जाहिर है मुख्यमंत्री मोहन यादव ने भाजपा की गुजरात लॉबी के दवाब में आकर इस तरह समझौता करके मध्यप्रदेश की जनता के साथ विश्वासघात किया है। यह विवाद 39 वर्षों से चल रहा था और गुजरात पर मध्यप्रदेश की अदायगी थी लेकिन गुजरात शुरू से ही पैसे देने में आनाकानी करता आ रहा था। मध्य प्रदेश की सबसे ज्यादा खेती की जमीन डूबी। सबसे ज्यादा गांव उजड़े। सबसे ज्यादा जंगल डूबे। इसलिए मध्य प्रदेश ने पुनर्वास खर्च, राजस्व और वन भूमि और सरकारी इमारतों के नुकसान की भरपाई के रूप में गुजरात से 07 हजार 669 करोड़ रूपये की मांग की थी। लेकिन उल्टे गुजरात को 217 करोड़ रूपये देने के समझौते पर हस्ताक्षर कर आए। सरदार सरोवर परियोजना नर्मदा घाटी की सबसे महत्वपूर्ण बहुउद्देशीय योजनाओं में से एक है, जिसमें जल, बिजली और लागत का बंटवारा संबंधित राज्यों के बीच तय नियमों के अनुसार किया जाता। इस मुद्दे पर विपक्ष ने सरकार की भूमिका पर सवाल उठाए हैं। यह

"

केवल वित्तीय मामला नहीं बल्कि राज्य के दीर्घकालिक आर्थिक हितों से जुड़ा विषय है। इस निर्णय का असर करोड़ों लोगों और राज्य की विकास योजनाओं पर पड़ सकता है। राज्य सरकार की ओर से अपेक्षित मजबूती के साथ पक्ष नहीं रखे जाने के आरोप लग रहे हैं। सरदार सरोवर बांध के निर्माण के बाद से ही इसका विरोध शुरू हो गया। बांध के निर्माण से सबसे ज्यादा वन क्षेत्र मध्य प्रदेश का प्रभावित हुआ। मध्य प्रदेश की सबसे ज्यादा जमीन डूब में आई। डूब क्षेत्र में मध्य प्रदेश के 178 गांव और जंगल आए। डैम की वजह से 37 हजार 533 हेक्टेयर मध्य प्रदेश की भूमि डूब क्षेत्र में आई। इसके बाद जब 2014 में बांध की ऊंचाई बढ़ाकर 58 मीटर की गई तो मध्य प्रदेश की 05 हजार हेक्टेयर और जमीन पानी में डूब गई। इसके बाद डूब प्रभावित गांवों की संख्या बढ़कर 192 पहुंच गई। इस बांध के निर्माण की वजह से मध्य प्रदेश में किए गए विस्थापन के लिए मध्य प्रदेश ने 2013 के भूमि अधिग्रहण कानून और बाजार भाव के हिसाब से गुजरात सरकार से 7669 करोड़ का दावा पेश किया लेकिन गुजरात सरकार 2001 के पुराने भूमि अधिग्रहण कानून और बाजार भाव के हिसाब से कुल राशि 281 करोड़ रूपए देने पर अड़ा रहा। नर्मदा नदी पर बने सरदार सरोवर बांध का उद्देश्य गुजरात, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र और राजस्थान के बीच जल एवं बिजली का न्यायसंगत वितरण सुनिश्चित करना था। लेकिन समय-समय पर जल प्रबंधन और बांध के संचालन को लेकर विवाद सामने आते रहे हैं। मध्यप्रदेश नर्मदा बेसिन का सबसे बड़ा भागीदार होने के बावजूद अपने अधिकारों का पूरा लाभ नहीं उठा पा रहा है। यह परियोजना नहीं, बल्कि करोड़ों लोगों की आजीविका, कृषि और जल सुरक्षा से जुड़ा विषय है। बैठक में वास्तव में मध्यप्रदेश की प्रमुख मांगों की अनदेखी हुई है, इसे राज्य के लिए एक गंभीर चेतावनी के रूप में देखा जाना चाहिए।

जब सरदार सरोवर बांध की ऊंचाई 90 मीटर तक 2000 से सीमित थी, तब मध्यप्रदेश सरकार ने परियोजना से होने वाली क्षति के लिए 281.46 करोड़ रूपए के मुआवजे की मांग की थी। इस राशि में वन क्षेत्र के लिए 112.51 करोड़ रूपए, सरकारी भूमि के लिए 157.61 करोड़ रूपए तथा जलमग्न वन भूमि के लिए 11.34 करोड़ रूपए शामिल थे। इसके बाद बांध की उंचाई 110 और फिर 2014 में ऊंचाई बढ़ाकर 121.892 मीटर तक बढ़ी और 2017 में 138.68 मीटर कर दी गई। बांध की ऊंचाई बढ़ने के साथ मध्यप्रदेश में डूब क्षेत्र का विस्तार होता गया और बड़ी मात्रा में वन भूमि, सरकारी भूमि, कृषि क्षेत्र तथा अन्य प्राकृतिक संसाधन जलमग्न हुए। बांध की ऊंचाई बढ़ाने से मध्य प्रदेश के पूर्व में निर्धारित डूब का क्षेत्र और बढ़ गया है और इसके चलते हजारों आदिवासियों 2019 से ही प्रभावित हो रहे हैं। 7669 करोड़ रूपए की डूब क्षेत्र की वैध भरपाई तथा पुनर्वास के लिए 2900 करोड़ रूपए के दावे की अनदेखी किस आधार पर की गई है और अब मध्य प्रदेश सरकार हजारों विस्थापितों का पुनर्वास कार्य काफी प्रभावित हुआ।

"

विजया पाठक

चार राज्यों के बीच चल रहा सरदार सरोवर बांध का यह विवाद पिछले कई सालों से लंबित था लेकिन अब चारों राज्यों और केन्द्र में बीजेपी की सरकार की वजह से विवाद का रास्ता निकलना आसान हो गया। केन्द्रीय गृहमंत्री अमित शाह की मौजूदगी में 07 जुलाई 2026 को नई दिल्ली में एक उच्च स्तरीय बैठक हुई। यह बैठक जल संसाधन मंत्री सीआर पाटिल और चारों राज्यों के मुख्यमंत्री के साथ की गई। बैठक में सभी राज्य वन टाइम सैटलमेंट पर तैयार हो गए। अब मध्य प्रदेश के अलावा राजस्थान, महाराष्ट्र को करोड़ों का भुगतान गुजरात सरकार को करना होगा। वन टाइम सैटलमेंट के तहत मध्य प्रदेश को 217 करोड़ की राशि गुजरात को देना होगी। इसके पीछे तर्क रखा गया कि बांध निर्माण में आई अड़चनों की वजह से इसके निर्माण की लागत कई गुना तक बढ़ गई।

मध्यप्रदेश को 7,769 करोड़ मिलने की जगह 550 करोड़ चुकाने की नौबत

चारों राज्य सालों तक एक दूसरे से मांगते रहे राशि- राजस्थान सरकार ने बांध के निर्माण में 556 करोड़ की राशि लगाई थी, इसलिए राजस्थान सरकार इसका समायोजन मांग रहा था। महाराष्ट्र सरकार द्वारा 03 हजार करोड़ रुपए गुजरात सरकार से मांगे जा रहे थे, क्योंकि बांध से महाराष्ट्र में भी वन भूमि और अन्य संपत्तियां डूब क्षेत्र में आई थीं। उधर गुजरात सरकार द्वारा भी मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और राजस्थान सरकार से 7974.86 करोड़ का दावा कर रहा था,

केन्द्रीय गृहमंत्री अमित शाह बीजेपी के, चारो राज्यों के मुख्यमंत्री बीजेपी के। सभी ने आपस में समझौता कर लिया और मध्यप्रदेश को 7769 करोड़ का चूना लगा दिया। वाहवाही लूटी जा रही है कि 39 साल का विवाद एक झटके में निपटा दिया। सवाल उठता है कि जब लेनदारी माफ ही कर दी तो समझौता कैसा। मुआवजा लेना ही नहीं था तो विवाद को अब तक खींचा ही क्यों।

क्योंकि इस बांध का महाराष्ट्र और राजस्थान को भी फायदा पहुंचा। इसके तहत गुजरात सरकार द्वारा मध्य प्रदेश से 5516.5 करोड़ रुपए की मांग की गई थी। इसके अलावा महाराष्ट्र से 1883.84 करोड़ और राजस्थान से 574 करोड़ रुपए की मांग की गई। नर्मदा नदी पर सबसे बड़ा बांध सरदार सरोवर बांध है। गुजरात के केवड़िया में बने इस बांध की नींव सहित कुल ऊंचाई 163 मीटर है और 1210 मीटर लंबा है। यह दुनिया के सबसे बड़े कंक्रीट गुरुत्वाकर्षण बांधों में से एक है। इस बांध से पैदा होने वाली बिजली का लाभ गुजरात के अलावा मध्य प्रदेश, राजस्थान, और महाराष्ट्र को मिलता है। इसमें से 57 फीसदी हिस्सा मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र को 27 फीसदी और गुजरात को 16 फीसदी बिजली साझा की जाती है।

नर्मदा नदी पर सरदार सरोवर के अलावा 04 और बड़े बांध है, यह सभी मध्य प्रदेश में हैं। इसमें खंडवा जिले के पुनासा में इंदिरा सागर बांध, खंडवा जिले में ओंकारेश्वर बांध, जबलपुर में बरगी और खरगोन में महेश्वर बांध शामिल है।

मध्य प्रदेश सरकार ने जलमग्न भूमि और अन्य प्रभावित परिसंपत्तियों का पुनर्मूल्यांकन कराया और इस पुनर्मूल्यांकन के अनुसार राज्य ने अपने डूब क्षेत्र की

गुजरात के केवड़िया में बने इस बांध की नींव सहित कुल ऊंचाई 163 मीटर है और 1210 मीटर लंबा है। यह दुनिया के सबसे बड़े कंक्रीट गुरुत्वाकर्षण बांधों में से एक है। इस बांध से पैदा होने वाली बिजली का लाभ गुजरात के अलावा मध्य प्रदेश, राजस्थान, और महाराष्ट्र को मिलता है। इसमें से 57 फीसदी हिस्सा मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र को 27 फीसदी और गुजरात को 16 फीसदी बिजली साझा की जाती है।

भरपाई के दावे को 281.46 करोड़ रुपए से बढ़ाकर 7,669 करोड़ रुपए किया, क्योंकि पूर्व का मूल्यांकन सरदार सरोवर बांध की ऊंचाई के 90 मीटर तक के लिए किया गया था जबकि अब यह ऊंचाई 138.86 मीटर कर दी गई है। ऐसे में इस राशि का बढ़ाना वाजिब है। बांध की ऊंचाई बढ़ाने से मध्य प्रदेश के पूर्व में निर्धारित डूब का क्षेत्र और बढ़ गया है और इसके चलते हजारों आदिवासियों 2019 से ही प्रभावित हो रहे हैं। 7669 करोड़ रुपए की डूब क्षेत्र की वैध

बांध की ऊंचाई बढ़ाने से मध्य प्रदेश के पूर्व में निर्धारित डूब का क्षेत्र और बढ़ गया है और इसके चलते हजारों आदिवासियों 2019 से ही प्रभावित हो रहे हैं।

भरपाई तथा पुनर्वास के लिए 2900 करोड़ रुपए के दावे की अनदेखी किस आधार पर की गई है और अब मध्य प्रदेश सरकार हजारों विस्थापितों का पनुर्वास कार्य कैसे करेगी। जब सरदार सरोवर बांध की ऊंचाई 90 मीटर तक 2000 से सीमित थी, तब मध्यप्रदेश सरकार ने परियोजना से होने वाली क्षति के लिए 281.46 करोड़ रुपए के मुआवजे की मांग की थी। इस राशि में वन क्षेत्र के लिए 112.51 करोड़ रुपए, सरकारी भूमि के लिए 157.61 करोड़ रुपए तथा

मध्यप्रदेश की 55 फीसदी जमीन डूबी, फिर ज्यादा लाभ गुजरात को क्यों?

सरदार सरोवर बांध की ऊंचाई बढ़ने से मध्य प्रदेश की अतिरिक्त जमीन डूब में आई, जिस पर मुआवजा राशि को लेकर विवाद पुराना था। मध्य प्रदेश ने 2013 के नए कानून और आधुनिक बाजार दरों के आधार पर 7,669 करोड़ रुपये का संशोधित दावा पेश किया था। इसके विपरीत, गुजरात सरकार 2001 के पुराने मानकों के हिसाब से मात्र 281 करोड़ रुपये ही देने पर अड़ी रही, जो कुल मांग का लगभग 3.6 फीसदी बैठता है। हालांकि, हालिया राजनीतिक और प्रशासनिक समझौतों के तहत वित्तीय देनदारियों के नए समीकरण तय किए गए हैं। नर्मदा नदी पर सरदार सरोवर बांध गुजरात में स्थित है और उसका पूरा नियंत्रण भी गुजरात के पास है। परियोजना का सबसे बड़ा लाभार्थी भी गुजरात ही है। इसके विपरीत बांध में डूबी कुल भूमि का 55 प्रतिशत हिस्सा मध्यप्रदेश का है। वर्ष 2014 में बांध की ऊंचाई बढ़ाए जाने के कारण प्रदेश की लगभग 5000 हेक्टेयर अतिरिक्त भूमि डूब में आ गई और प्रभावित गांवों की संख्या 178 से बढ़कर 192 हो गई। इसी आधार पर मध्यप्रदेश ने 2013 के भूमि अधिग्रहण कानून के तहत बाजार भाव के अनुसार 07 हजार 669 करोड़ रुपये का दावा किया था। वहीं गुजरात सरकार वर्ष 2001 की दरों के आधार पर केवल 288 करोड़ रुपये देने पर अड़ी हुई थी। सरदार सरोवर बांध में सबसे ज्यादा जमीन मध्यप्रदेश की ही डूबी है जो 55 फीसदी के लगभग है। बावजूद इसके इस बांध का लाभ सबसे ज्यादा गुजरात को हो रहा है। मध्यप्रदेश में लगभग 19,628 हेक्टेयर भूमि सरदार सरोवर के जलाशय में डूब क्षेत्र के अंतर्गत आती है। इसमें करीब 2,809 हेक्टेयर वन भूमि भी शामिल है। लगभग 178 गांव परियोजना के डूब क्षेत्र से प्रभावित हुए हैं। निजी भूमि और मकानों का मुआवजा दिया जा चुका है, जबकि राजस्व भूमि, वन भूमि और खनिज क्षेत्र के मुआवजे को लेकर मध्यप्रदेश और गुजरात के बीच लंबे समय से विवाद रहा है। डूब का प्रभाव मुख्य रूप से धार, बड़वानी, खरगोन और अलीराजपुर जिलों के गांवों पर पड़ा है। हजारों परिवारों का पुनर्वास किया गया। बड़ी मात्रा में कृषि भूमि जलाशय में समा गई। आदिवासी बहुल क्षेत्रों के अनेक गांव प्रभावित हुए। पुनर्वास, मुआवजा और बैकवॉटर स्तर को लेकर वर्षों से विवाद और कानूनी मामले चलते रहे हैं।

जलमग्न वन भूमि के लिए 11.34 करोड़ रुपए शामिल थे। इसके बाद बांध की उंचाई 110 और फिर 2014 में ऊंचाई बढ़ाकर 121.892 मीटर तक बढ़ी और 2017 में 138.68 मीटर कर दी गई। बांध की ऊंचाई बढ़ने के साथ मध्यप्रदेश में डूब क्षेत्र

का विस्तार होता गया और बड़ी मात्रा में वन भूमि, सरकारी भूमि, कृषि क्षेत्र तथा अन्य प्राकृतिक संसाधन जलमग्न हुए। नर्मदा जल विवाद न्यायाधिकरण के 1979 से लागू रहे प्रावधानों के अनुसार परियोजना से प्रभावित राज्यों के बीच वन भूमि, सरकारी

सरदार सरोवर बाँध को लेकर हुआ
नर्मदा बचाओ आंदोलन

भारत में विकास और पर्यावरण के बीच संतुलन का प्रश्न लंबे समय से चर्चा का विषय रहा है। स्वतंत्रता के बाद देश में सिंचाई, बिजली और पेयजल की बढ़ती आवश्यकता को पूरा करने के लिए अनेक बड़े बाँधों का निर्माण किया गया। इन परियोजनाओं ने देश के आर्थिक विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया, लेकिन इनके कारण लाखों लोगों का विस्थापन और पर्यावरणीय परिवर्तन भी हुए। इन्हीं परियोजनाओं में सरदार सरोवर बाँध सबसे अधिक चर्चित रहा। यह परियोजना जितनी अपनी विकासात्मक उपलब्धियों के लिए प्रसिद्ध है, उतनी ही इससे जुड़े आंदोलनों के कारण भी जानी जाती है। सरदार सरोवर बाँध के विरोध में चला नर्मदा बचाओ आंदोलन भारत के

भूमि तथा पुनर्वास से संबंधित दायित्वों का निर्वहन किया जाना अनिवार्य रहा है लेकिन अब इसका लगातार उल्लंघन किया जा रहा है। अकेले मध्य प्रदेश ही नहीं महाराष्ट्र भी गुजरात सरकार ने भी डूब क्षेत्र के बढ़े हुए क्षेत्रों के लिए महाराष्ट्र शासन ने भी अपनी

इतिहास के सबसे लंबे और प्रभावशाली जन आंदोलनों में से एक माना जाता है। इस आंदोलन ने विकास, पर्यावरण संरक्षण, आदिवासी अधिकार, पुनर्वास और मानवाधिकार जैसे मुद्दों को राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रमुखता से उठाया। जैसे-जैसे बाँध का निर्माण आगे बढ़ा, यह स्पष्ट होने लगा कि जलाशय बनने से मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और गुजरात के अनेक गाँव डूब क्षेत्र में आ जाएँगे। इससे हजारों परिवारों को अपने घर छोड़ने पड़े। आदिवासी समुदायों की भूमि डूबने लगी। जंगल और कृषि भूमि प्रभावित हुई। स्थानीय संस्कृति और आजीविका पर संकट उत्पन्न हुआ। इन्हीं परिस्थितियों ने आंदोलन की नींव रखी। 1980 के दशक के मध्य में प्रभावित लोगों और सामाजिक कार्यकर्ताओं ने मिलकर नर्मदा बचाओ आंदोलन (NBA) की शुरुआत की।

इस आंदोलन का उद्देश्य केवल बाँध का विरोध करना नहीं था, बल्कि यह सुनिश्चित करना भी था कि प्रभावित लोगों का उचित पुनर्वास हो। पर्यावरणीय नियमों का पालन किया जाए। विकास की प्रक्रिया में स्थानीय लोगों की भागीदारी हो। आदिवासी समुदायों के अधिकार सुरक्षित रहें। नर्मदा बचाओ आंदोलन का नेतृत्व कई सामाजिक कार्यकर्ताओं ने किया। इनमें सबसे प्रमुख नाम मेधा पाटकर का है। मैं भी इस आंदोलन का हिस्सा बनी थी। अन्य सामाजिक कार्यकर्ताओं, पर्यावरणविदों, मानवाधिकार संगठनों, बुद्धिजीवियों तथा स्थानीय

वन भूमि 6488 हेक्टेयर के बदले में 1,313 करोड़ और पुनर्वास कार्य के लिए 300 करोड़ रुपए की मांग रखी। दोनों राज्यों को सरदार सरोवर से मिलने वाला लाभ यानी म.प्र. को 56 प्रतिशत और महाराष्ट्र को 27 प्रतिशत बांध से निर्मित बिजली का

ग्रामीणों ने भी आंदोलन में सक्रिय भूमिका निभाई। आंदोलन को देश के अनेक विश्वविद्यालयों, सामाजिक संगठनों तथा अंतरराष्ट्रीय पर्यावरण समूहों का भी समर्थन प्राप्त हुआ। आंदोलन के समर्थकों का उद्देश्य विकास रोकना नहीं, बल्कि उसे अधिक न्यायपूर्ण और मानवीय बनाना था। सरदार सरोवर बाँध और नर्मदा बचाओ आंदोलन ने भारत को यह सिखाया कि विकास आवश्यक है लेकिन पर्यावरण संरक्षण भी उतना ही आवश्यक है। विस्थापित लोगों का सम्मानजनक पुनर्वास विकास का अनिवार्य हिस्सा होना चाहिए। स्थानीय समुदायों की भागीदारी से ही विकास परियोजनाएँ अधिक सफल और टिकाऊ बन सकती हैं। आज अधिकांश विकास परियोजनाओं में पर्यावरणीय प्रभाव आकलन, जनसुनवाई और पुनर्वास नीति को विशेष महत्त्व दिया जाता है, जिसका श्रेय आंशिक रूप से ऐसे आंदोलनों से उत्पन्न सार्वजनिक विमर्श को भी जाता है। सरदार सरोवर बाँध को लेकर हुआ आंदोलन भारत के लोकतांत्रिक इतिहास का एक महत्त्वपूर्ण अध्याय है। इस आंदोलन ने केवल एक बाँध का विरोध नहीं किया, बल्कि विकास की प्रक्रिया में सामाजिक न्याय, पर्यावरण संरक्षण और मानवाधिकारों को समान महत्त्व देने की माँग की। नर्मदा बचाओ आंदोलन ने यह प्रश्न उठाया कि विकास का वास्तविक उद्देश्य केवल आर्थिक वृद्धि नहीं, बल्कि लोगों के जीवन की गुणवत्ता और गरिमा में सुधार भी होना चाहिए। सरदार सरोवर बाँध और उससे जुड़ा आंदोलन भारत के लिए एक महत्त्वपूर्ण सीख है कि भविष्य की विकास परियोजनाएँ तभी सफल मानी जाएँगी जब वे आर्थिक प्रगति, पर्यावरणीय संतुलन और सामाजिक न्याय-

लाभ अब तक नहीं मिलने पर दोनों राज्यों 900 और 450 करोड़ रुपए अतिरिक्त भरपाई की मांग भी की है। मध्यप्रदेश और महाराष्ट्र के वैध वित्तीय और पुनर्वास संबंधी अधिकारों से किसी भी प्रकार का समझौता राज्य और उसके लाखों प्रभावित नागरिकों

इन तीनों उद्देश्यों को समान रूप से साधने का प्रयास करें। इस आंदोलन ने बड़े बाँधों के सामाजिक और पर्यावरणीय प्रभावों पर राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर चर्चा को जन्म दिया। दूसरी ओर, इस परियोजना से जुड़े विस्थापन, पर्यावरणीय प्रभाव तथा पुनर्वास जैसी चुनौतियाँ भी उतनी ही महत्त्वपूर्ण हैं। किसी भी बड़े विकास कार्य की सफलता केवल उसके आर्थिक लाभों से नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय और पर्यावरणीय संतुलन से भी आँकी जाती है। इसलिए आवश्यक है कि विकास और संरक्षण के बीच संतुलित दृष्टिकोण अपनाया जाए।

आंदोलन के प्रमुख मुद्दे

विस्थापनः आंदोलन का सबसे बड़ा मुद्दा विस्थापन था। हजारों परिवारों को अपनी पैतृक भूमि छोड़नी पड़ी। आदिवासी समाज का जीवन जंगल, नदी और भूमि पर आधारित था। विस्थापन के कारण उनकी आजीविका और सांस्कृतिक पहचान दोनों प्रभावित हुईं।

पुनर्वासः सभी प्रभावित परिवारों को पर्याप्त भूमि नहीं मिली। मुआवजा समय पर नहीं दिया गया। पुनर्वास स्थलों पर सड़क, पानी, स्कूल और स्वास्थ्य जैसी मूलभूत सुविधाओं का अभाव था। भूमि के बदले केवल नकद मुआवजा देना पर्याप्त नहीं था। उनकी मुख्य माँग थी कि पहले पुनर्वास, फिर बाँध का निर्माण।

पर्यावरण संरक्षणः हजारों हेक्टेयर वन क्षेत्र जलमग्न हो जाएगा। जैव विविधता को नुकसान पहुँचेगा। वन्य जीवों के प्राकृतिक आवास समाप्त होंगे। नदी का प्राकृतिक प्रवाह प्रभावित होगा। मछलियों की प्रजातियों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। परियोजना के पर्यावरणीय प्रभावों का स्वतंत्र मूल्यांकन कराने की माँग की।

आदिवासी अधिकारः आदिवासी समुदायों का जीवन प्राकृतिक संसाधनों पर आधारित था। आदिवासियों से उनकी भूमि बिना पर्याप्त

के हितों के प्रतिकूल नहीं होना चाहिए। मध्यप्रदेश सरकार को राज्य के 7,669 करोड़ रुपए के वैध भरपाई और हजारों विस्थापित परिवारों के पूर्ण और न्यायसंगत पुनर्वास के लिए दृढ़ता से गुजरात सरकार के सामने वित्तीय सहायता का अपना पक्ष

सहमति के ली गई। उनकी संस्कृति और पारंपरिक जीवन शैली पर संकट उत्पन्न हुआ। पुनर्वास नीति उनकी सामाजिक आवश्यकताओं के अनुरूप नहीं थी।

अहिंसक था नर्मदा बचाओ आंदोलन

आंदोलन के अंतर्गत धरना, पदयात्राएँ, जनसभाएँ, सत्याग्रह, जल सत्याग्रह, भूख हड़ताल, हस्ताक्षर अभियान, जनजागरण कार्यक्रम आयोजित किए गए। आंदोलन का उद्देश्य लोकतांत्रिक तरीके से अपनी बात सरकार तक पहुँचाना था। आंदोलन का सबसे चर्चित स्वरूप जल सत्याग्रह था। प्रभावित ग्रामीण कई दिनों तक पानी में खड़े रहकर शांतिपूर्ण विरोध करते थे। इसका उद्देश्य सरकार का ध्यान विस्थापित लोगों की समस्याओं की ओर आकर्षित करना था। जल सत्याग्रह ने राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय मीडिया का व्यापक ध्यान आकर्षित किया। नर्मदा बचाओ आंदोलन ने परियोजना के विरुद्ध अनेक याचिकाएँ दायर कीं। मामला सर्वोच्च न्यायालय तक पहुँचा। न्यायालय ने समय-समय पर पुनर्वास की समीक्षा की। पर्यावरणीय शर्तों के पालन पर बल दिया। निर्माण की विभिन्न अवस्थाओं पर निर्णय दिए। हालाँकि न्यायालय ने अंततः परियोजना को जारी रखने की अनुमति दी, लेकिन पुनर्वास और पर्यावरणीय मानकों का पालन अनिवार्य बताया। परियोजना के प्रारंभिक चरण में विश्व बैंक ने आर्थिक सहायता प्रदान की थी। इसके बाद स्वतंत्र समीक्षा कराई गई। समीक्षा में कई कमियाँ सामने आने पर 1993 में विश्व बैंक ने परियोजना से अपनी वित्तीय सहायता वापस ले ली। यह आंदोलन की एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि मानी जाती है।

नर्मदा बचाओ आंदोलन ने अनेक महत्त्वपूर्ण उपलब्धियाँ हासिल कीं-

- पुनर्वास का मुद्दा राष्ट्रीय बहस का विषय बना।
- पर्यावरणीय प्रभाव आकलन को अधिक महत्त्व मिला।
- विकास परियोजनाओं में सामाजिक प्रभावों पर ध्यान बढ़ा।
- विस्थापित लोगों के अधिकारों की चर्चा व्यापक हुई।
- अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं की जवाबदेही पर प्रश्न उठे।
- लोकतांत्रिक विरोध के एक प्रभावी मॉडल के रूप में यह आंदोलन स्थापित हुआ।

मुआवजे और विवाद के मुख्य कारण

कानूनों का अंतरः मध्य प्रदेश सरकार ने नए भूमि अधिग्रहण कानून (2013) और बढ़े हुए बाजार भाव के अनुसार मुआवजा मांगा था।

पुराना आधारः गुजरात सरकार ने पुराने (2001 के) आकलन और दरों को ही आधार मानने की जिद रखी, जिससे दोनों आंकड़ों में भारी अंतर आया।

डूब क्षेत्र में विस्तारः बांध की ऊंचाई 138.68 मीटर तक पहुंचने से मध्य प्रदेश के बड़वानी, धार और अलीराजपुर के 192 गांवों की लगभग 20,822 हेक्टेयर जमीन जलमग्न हुई।

रखना चाहिए और इसके लिए राज्य सरकार को आवश्यक होने पर उपलब्ध सभी वैधानिक और संवैधानिक उपायों का उपयोग करना चाहिए।

यह है मामला

प्रदेश में सरदार सरोवर बांध के डूब क्षेत्र

प्रमुख आंदोलनकर्ता

मेधा पाटकर

अरूंधति राय

बाबा आमटे

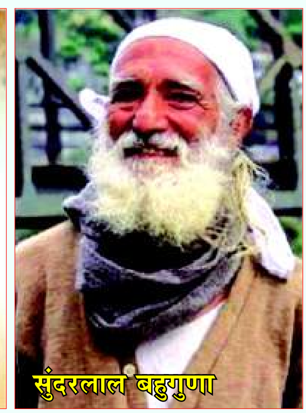
सुंदरलाल बहुगुणा

मेधा पाटकरः मेधा पाटकर नर्मदा बचाओ आंदोलन की प्रमुख नेता हैं, जिन्होंने स्थानीय आदिवासियों को संगठित करके बड़े बांधों के खिलाफ न्याय, पुनर्वास और पर्यावरण की रक्षा के लिए ऐतिहासिक जन-संघर्ष का नेतृत्व किया। सरदार सरोवर परियोजना के खिलाफ आदिवासियों, किसानों और मजदूरों को एक मंच पर लाया। नर्मदा घाटी में कई बार जल सत्याग्रह और लंबी भूख हड़तालें कीं। विस्थापितों के उचित पुनर्वास और उनके कानूनी अधिकारों की लड़ाई लड़ी। विकास के नाम पर होने वाले पारिस्थितिक विनाश के प्रति जागरूकता फैलाई।

बाबा आमटेः प्रसिद्ध सामाजिक कार्यकर्ता, जिन्होंने नर्मदा घाटी आकर आंदोलन को राष्ट्रीय और नैतिक समर्थन दिया। बाबा आमटे एक महान सामाजिक कार्यकर्ता थे, जिन्होंने कुष्ठ रोगियों की सेवा और नर्मदा बचाओ आंदोलन को अपना पूरा समर्थन दिया। उन्होंने आनंदवन की स्थापना की और नर्मदा घाटी आकर आदिवासियों के अधिकारों की लड़ाई को देश भर में एक नैतिक आवाज़ दी। बाबा आमटे नर्मदा बांध के खिलाफ चल रहे आंदोलन से जुड़े और घाटी में रहकर आदिवासियों के विस्थापन के खिलाफ आवाज़ उठाई। उनके जुड़ने से इस क्षेत्रीय आंदोलन को एक राष्ट्रीय और नैतिक बल मिला।

अरुंधति रायः प्रख्यात लेखिका और एक्टिविस्ट, जिन्होंने अपने लेखन व भाषणों से बांध के विरोध को वैश्विक स्तर पर उठाया। सरदार सरोवर बांध परियोजना और नर्मदा बचाओ आंदोलन के खिलाफ वैश्विक स्तर पर आवाज़ उठाई। नर्मदा घाटी में बन रहे बड़े बांधों के खिलाफ नर्मदा बचाओ आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया। बांधों के विस्थापन और पर्यावरण पर पड़े असर को दुनिया के सामने रखने के लिए द ग्रेटर कॉमन गुड (The Greater Common Good) और अलजेब्र ऑफ़ इनफिनिटी जस्टिस जैसे महत्वपूर्ण निबंध लिखे।

सुंदरलाल बहुगुणाः चिपको आंदोलन के प्रसिद्ध पर्यावरणविद्, जो इस आंदोलन से जुड़े रहे। भारत के एक महान गांधीवादी पर्यावरणविद् थे, जो 1970 के दशक के चिपको आंदोलन और 1980 के दशक के टिहरी बांध विरोध आंदोलन के प्रमुख नेता व प्रणेता रहे। 1980 के दशक से लेकर 2004 तक टिहरी बांध के निर्माण के खिलाफ अहिंसक विरोध प्रदर्शन और आमरण अनशन किया। उन्हें पर्यावरण संरक्षण में उनके अतुलनीय योगदान के लिए देश के दूसरे सबसे बड़े नागरिक सम्मान पद्म विभूषण से सम्मानित किया गया था

स्वराज पुरीः सरदार सरोवर बांध और नर्मदा आंदोलन से जुड़े मामलों में मध्य प्रदेश के पूर्व पुलिस महानिदेशक स्वराज पुरी का नाम चर्चा में रहा है। सेवानिवृत्ति के बाद पूर्व डीजीपी स्वराज पुरी को मध्य प्रदेश सरकार द्वारा संचालित नर्मदा घाटी विकास प्राधिकरण (NVDA) के अंतर्गत शिकायत निवारण प्राधिकरण (GRA) का सदस्य बनाया गया था।

में शासकीय भूमि, संपत्ति, वन और खनिज संपदा के डूब में आने के बाद वर्ष 2019 में तत्कालीन कांग्रेस सरकार ने इन सभी का सर्वे कराया था। इसके बाद गुजरात सरकार से 07 हजार 669 करोड़ रुपये की राशि की मांग की गई थी। प्रदेश सरकार द्वारा तैयार

सरदार सरोवर बाँध से जुड़े विवाद

विस्थापन का विवाद

- सबसे बड़ा विवाद लोगों के विस्थापन को लेकर रहा।
- बाँध के जलाशय क्षेत्र में अनेक गाँव आ गए, जिसके कारण हजारों परिवारों को अपने घर छोड़ने पड़े।
- प्रभावित लोगों में आदिवासी समुदाय, किसान, भूमिहीन मजदूर, वन पर निर्भर परिवार शामिल थे।

पुनर्वास की समस्या

सरकार ने पुनर्वास नीति बनाई, लेकिन अनेक सामाजिक संगठनों ने आरोप लगाया कि पुनर्वास में देरी हुई। सभी परिवारों को भूमि नहीं मिली। मूलभूत सुविधाएँ पर्याप्त नहीं थीं। आजीविका के साधनों की व्यवस्था कमजोर रही। कई स्थानों पर लोगों को नए वातावरण में बसने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ा।

पर्यावरणीय विवाद

परियोजना के कारण बड़े क्षेत्र में वन डूब गए। इसके परिणामस्वरूप जैव विविधता प्रभावित हुई। वन्य जीवों का प्राकृतिक आवास नष्ट हुआ। नदी के प्राकृतिक प्रवाह में परिवर्तन आया। मछलियों की कुछ प्रजातियों पर प्रभाव पड़ा। मिट्टी और पारिस्थितिकी तंत्र में बदलाव आया। पर्यावरणविदों ने परियोजना के दीर्घकालिक प्रभावों पर चिंता व्यक्त की।

नर्मदा बचाओ आंदोलन

सरदार सरोवर परियोजना के विरोध में सबसे प्रसिद्ध आंदोलन नर्मदा बचाओ आंदोलन था। इस आंदोलन का नेतृत्व सामाजिक

की गई सूची पर गुजरात सरकार ने आपत्ति दर्ज कराई, जिसके बाद मामला केंद्रीय नर्मदा ट्रिब्यूनल बोर्ड के पास पहुंच गया। जिन स्थानों पर गुजरात ने आपत्ति दर्ज कराई थी, वहां की वास्तविक स्थिति जानने के लिए गत वर्ष प्रदेश सरकार की ओर से

की वाहक भी रही हैं। बढ़ती जनसंख्या, कृषि की बढ़ती आवश्यकताओं, औद्योगिक विकास तथा ऊर्जा की मांग को देखते हुए बड़े बाँधों का निर्माण आवश्यक हो गया। इन्हीं महत्त्वपूर्ण परियोजनाओं में सरदार सरोवर बाँध का विशेष स्थान है। यह बाँध नर्मदा नदी पर निर्मित भारत की सबसे बड़ी बहुउद्देशीय परियोजनाओं में से एक है। सरदार सरोवर बाँध का उद्देश्य सिंचाई, पेयजल, जल विद्युत उत्पादन, बाढ़ नियंत्रण तथा क्षेत्रीय विकास को बढ़ावा देना है। इस परियोजना ने पश्चिम भारत के अनेक राज्यों के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यद्यपि यह परियोजना अनेक

कार्यकर्ताओं ने किया।

आंदोलन की प्रमुख माँगें थीं

विस्थापित लोगों का सम्मानजनक पुनर्वास। पर्यावरण संरक्षण। बाँध की ऊँचाई पर पुनर्विचार। विकास के मानवीय मॉडल को अपनाना। इस आंदोलन ने भारत ही नहीं, बल्कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी ध्यान आकर्षित किया।

कानूनी विवाद

परियोजना से जुड़े अनेक मामले उच्चतम न्यायालय तक पहुँचे। न्यायालय ने समय-समय पर विभिन्न आदेश दिए। एक ओर परियोजना के निर्माण को अनुमति दी गई, वहीं दूसरी ओर पुनर्वास और पर्यावरणीय शर्तों के पालन पर भी बल दिया गया।

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ जल संसाधनों का उचित प्रबंधन राष्ट्रीय विकास की आधारशिला माना जाता है। नदियाँ केवल जल का स्रोत ही नहीं, बल्कि सभ्यता, संस्कृति और आर्थिक प्रगति

विवादों और आंदोलनों का विषय भी रही, फिर भी इसे भारत की सबसे महत्त्वपूर्ण जल परियोजनाओं में गिना जाता है।

- वर्ष 1946 में नर्मदा नदी के विकास की योजना पर विचार प्रारंभ हुआ।
- 1961 में तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने इसकी आधारशिला रखी।
- बाद में राज्यों के बीच जल बँटवारे को लेकर विवाद उत्पन्न हुआ।
- 1969 में नर्मदा जल विवाद न्यायाधिकरण का गठन किया गया।
- 1979 में न्यायाधिकरण ने अपना अंतिम निर्णय दिया।
- इसके बाद परियोजना का निर्माण कार्य तेज़ी से प्रारंभ हुआ।
- वर्ष 2017 में बाँध का पूर्ण निर्माण सम्पन्न हुआ तथा इसे राष्ट्र को समर्पित किया गया।

नियुक्त आर्बिट्रेटर एवं पूर्व मुख्य सचिव अलका सिरोही ने भी निरीक्षण किया था।

गुजरात बांध की बढ़ी लागत की मांग कर रहा था

पिछले 30 वर्षों से विवाद इस बात को लेकर था कि मध्यप्रदेश डूब में आए गांवों

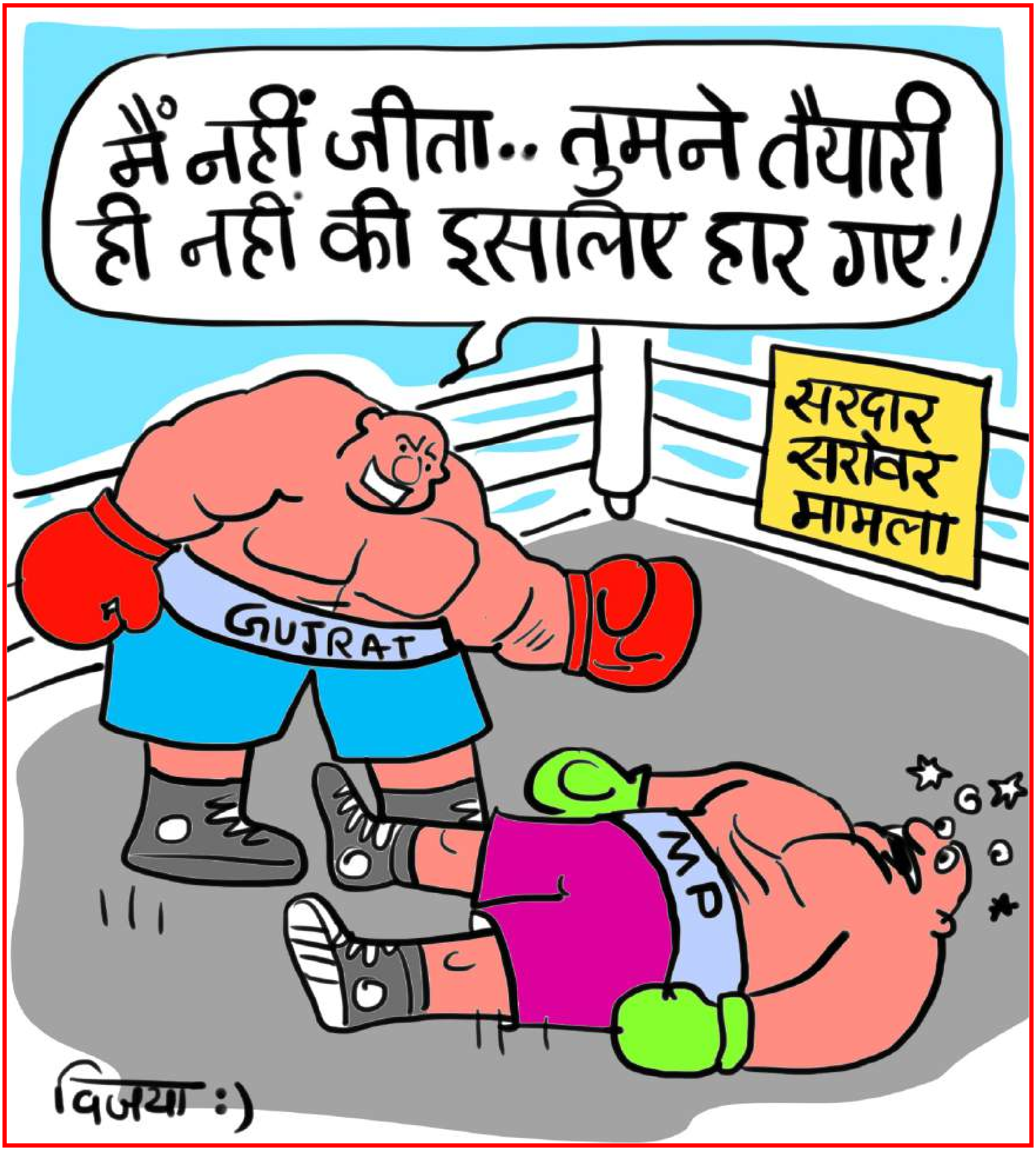

की भूमि, संपत्ति और अन्य परिसंपत्तियों का मुआवजा बढ़ी हुई दरों से मांग रहा था। दूसरी ओर गुजरात सरकार का तर्क था कि बांध का निर्माण तय समय पर पूरा नहीं हो सका और विरोध तथा कानूनी विवादों के कारण इसकी लागत काफी बढ़ गई।

इसलिए गुजरात सरकार ने बांध से जुड़े अन्य तीन राज्यों से बढ़ी हुई लागत में हिस्सेदारी की मांग की थी। अब समझौते के बाद अन्य राज्यों के दावे खारिज हो गए हैं और तीनों राज्यों को गुजरात को राशि देना पड़ेगी।

अब कैसे होगा डूब प्रभावितों का समाधान

सरदार सरोवर बांध के डूब प्रभावित 192 गांवों में से करीब 35 प्रतिशत गांवों में आज भी हजारों परिवार डूब क्षेत्र में रह रहे हैं। ये परिवार पिछले एक दशक से न तो पूरी तरह डूब क्षेत्र से बाहर आ सके हैं और न ही पुनर्वास की समस्याओं का समाधान हो पाया है। प्रदेश सरकार पिछले पांच वर्षों से यह कहती रही कि गुजरात सरकार से दावा की गई राशि मिलने के बाद डूब प्रभावितों की समस्याओं का समाधान किया जाएगा तथा पुनर्वास स्थलों के अधूरे विकास कार्य पूरे किए जाएंगे, लेकिन अब स्थिति उलट गई है। प्रदेश सरकार का 07 हजार 669 करोड़ रुपये का दावा खारिज हो गया है और उलटे उसे 550 करोड़ रुपये गुजरात सरकार को देने होंगे। ऐसे में डूब प्रभावितों और पुनर्वास स्थलों की समस्याओं के समाधान की उम्मीद फिलहाल और दूर होती नजर आ रही है।

सवाल हजारों विस्थापितों का भी है

विवाद केवल पैसों तक सीमित नहीं है। सबसे बड़ा प्रश्न उन हजारों परिवारों का है, जिन्होंने सरदार सरोवर परियोजना के लिए अपनी जमीन, घर और आजीविका खोई। परियोजना का सबसे बड़ा डूब क्षेत्र मध्यप्रदेश में है और सर्वाधिक विस्थापन भी यहीं हुआ। ऐसे में यदि राज्य अपने वित्तीय और पुनर्वास संबंधी अधिकारों पर पर्याप्त मजबूती से दावा नहीं रख पाया, तो इसका सीधा असर प्रभावित परिवारों के हितों पर पड़ सकता है।

कर्ज में डूबी सरकार और अपने हिस्से का पैसा भी दे आये

एक तरफ मोहन सरकार कर्ज की बैशाखी पर चल रही है वहीं दूसरी तरफ अपने हक के पैसों को लेने में नाकाम साबित हुई। प्रदेश की आर्थिक स्थिति बेहद चिंताजनक है। सरकार को बार-बार कर्ज लेना पड़ रहा है। उसके बावजूद प्रदेश को 550 करोड़ रूपये का भुगतान करने का समझौता होना प्रदेश के साथ अन्याय है। गुजरात सरकार पर जो लेनदारी बन रही थी वह मप्र के हक था और उसके साथ-साथ उन परिवारों का भी था जिनके घर उजड़े हैं, जिनकी जमीनें डूबी हैं। लेकिन सरकार ने तो न अपना हित देखा और न ही विस्थापितों का दुख-दर्द समझा।

नर्मदा आंदोलन- कब क्या हुआ?

जुलाई 1993- टाटा समाज विज्ञान संस्थान ने सात वर्षों के अध्ययन के बाद नर्मदा घाटी में बनने वाले सबसे बड़े सरदार सरोवर बांध के विस्थापितों के बारे में अपना शोधपत्र प्रस्तुत किया। इसमें कहा गया कि पुनर्वास एक गंभीर समस्या रही है। इस रिपोर्ट में ये सुझाव भी दिया गया कि बांध निर्माण का काम रोक दिया जाए और इस पर नए सिरे से विचार किया जाए।

अगस्त 1993- परियोजना के आकलन के लिए भारत सरकार ने योजना आयोग के सिंचाई मामलों के सलाहकार के नेतृत्व में एक पांच सदस्यीय समिति का गठन किया।

दिसम्बर 1993- केंद्रीय वन और पर्यावरण मंत्रालय ने कहा कि सरदार सरोवर परियोजना ने पर्यावरण संबंधी नियमों का पालन नहीं किया है।

जनवरी 1994- भारी विरोध को देखते हुए प्रधानमंत्री ने परियोजना का काम रोकने की घोषणा की।

मार्च 1994- मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री ने प्रधानमंत्री को पत्र लिखकर मामले में हस्तक्षेप करने का अनुरोध किया। मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री ने इस पत्र में कहा कि राज्य सरकार के पास इतनी बड़ी संख्या में लोगों के पुनर्वास के साधन नहीं हैं।

अप्रैल 1994- विश्व बैंक ने अपनी परियोजनाओं की वार्षिक रिपोर्ट में कहा कि सरदार सरोवर परियोजना में पुनर्वास का काम ठीक से नहीं हो रहा है।

जुलाई 1994- केंद्र सरकार की पांच सदस्यीय समिति ने अपनी रिपोर्ट सौंपी लेकिन अदालत के आदेश के कारण इसे जारी नहीं किया जा सका। इसी महीने में कई पुनर्वास केंद्रों में प्रदूषित पानी पीने से दस लोगों की मौत हुई।

नवंबर-दिसम्बर 1994- बांध बनाने के काम दोबारा शुरू करने के विरोध में नर्मदा बचाओ आंदोलन ने भोपाल में धरना देना शुरू किया।

दिसम्बर 1994- मध्य प्रदेश सरकार ने विधानसभा के सदस्यों की

सरदार सरोवर बाँधः भारत के विकास का एक महत्त्वपूर्ण आधार

भारत में नदियाँ केवल जल का स्रोत नहीं हैं, बल्कि कृषि, संस्कृति, अर्थव्यवस्था और सभ्यता का आधार भी हैं। बढ़ती जनसंख्या, सिंचाई की आवश्यकता,

एक समिति बनाई जिसने पुनर्वास के काम का जायज़ा लेने के बाद कहा कि भारी गड़बड़ियां हुई हैं।

जनवरी 1995- सर्वोच्च न्यायालय ने आदेश दिया कि पांच सदस्यों वाली सरकारी समिति की रिपोर्ट को जारी किया जाए। साथ ही, सुप्रीम कोर्ट ने बांध की उपयुक्त ऊंचाई तय करने के लिए अध्ययन के आदेश दिए।

मार्च 1995- विश्व बैंक ने अपनी एक रिपोर्ट में स्वीकार किया कि सरदार सरोवर परियोजना गंभीर समस्याओं में घिरी है।

जून 1995- गुजरात सरकार ने एक नर्मदा नदी पर एक नई विशाल परियोजना-कल्पसर शुरू करने की घोषणा की।

नवंबर 1995- सुप्रीम कोर्ट ने सरदार सरोवर बांध की ऊंचाई बढ़ाने की अनुमति दी।

1996- उचित पुनर्वास और ज़मीन देने की मांग को लेकर मेधा पाटकर के नेतृत्व में अलग-अलग बांध स्थलों पर धरना और प्रदर्शन जारी रहा।

अप्रैल 1997- महेश्वर के विस्थापितों ने मंडलेश्वर में एक जुलूस निकाला जिसमें ढाई हज़ार लोग शामिल हुए। इन लोगों ने सरकार और बांध बनाने वाली कंपनी एस कुमार्स की पुनर्वास योजनाओं पर सवाल उठाए।

अक्टूबर 1997- बांध बनाने वालों ने अपना काम तेज़ किया जबकि विरोध जारी रहा।

जनवरी 1998- सरकार ने महेश्वर और उससे जुड़ी परियोजनाओं की समीक्षा की घोषणा की और काम रोका गया।

अप्रैल 1998- दोबारा बांध का काम शुरू हुआ, स्थानीय लोगों ने निषेधाज्ञा को तोड़कर बांधस्थल पर प्रदर्शन किया, पुलिस ने लाठियां चलाईं और आंसू गैस के गोले छोड़े।

मई-जुलाई 1998- लोगों ने जगह-जगह पर नाकाबंदी करके निर्माण सामग्री को बांधस्थल तक पहुंचने से रोका।

नवंबर 1998- बाबा आमटे के नेतृत्व में एक विशाल जनसभा हुई और अप्रैल 1999 तक ये सिलसिला जारी रहा।

दिसम्बर 1999- दिल्ली में एक विशाल सभा हुई जिसमें नर्मदा घाटी के हज़ारों विस्थापितों ने हिस्सा लिया।

मार्च 2000- बहुराष्ट्रीय ऊर्जा कंपनी ऑगडेन एनर्जी ने महेश्वर बांध में 49 प्रतिशत हिस्सेदारी के एक समझौते पर हस्ताक्षर किए।

पेयजल संकट और ऊर्जा की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए स्वतंत्रता के बाद देश में अनेक बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं का निर्माण किया गया। इन्हीं परियोजनाओं में सरदार सरोवर बाँध सबसे महत्त्वपूर्ण परियोजनाओं में से एक है। यह बाँध नर्मदा

नदी पर गुजरात के नर्मदा जिले के केवड़िया के निकट निर्मित है। इसका नाम भारत के प्रथम उपप्रधानमंत्री और लौह पुरुष सरदार वल्लभभाई पटेल के सम्मान में रखा गया है। सरदार सरोवर परियोजना का उद्देश्य सिंचाई, पेयजल, जलविद्युत उत्पादन और

मध्य प्रदेश ने छोड़ा अपना हक : अजय सिंह, पूर्व नेता प्रतिपक्ष

कांग्रेस पार्टी ने इस सेटलमेंट को लेकर सवाल उठाते हुए मध्य प्रदेश के लिए घाटे का सौदा बताया है। पूर्व नेता प्रतिपक्ष अजय सिंह ने आरोप लगाया, मुख्यमंत्री मोहन यादव ने सरदार सरोवर के लगभग 07 हजार 770 करोड़ रुपए मुआवजे का मध्य प्रदेश का हक गुजरात के पक्ष में छोड़ दिया। उलटे अब मध्य प्रदेश 217 करोड़ रुपए गुजरात को देगा जबकि इस डैम का सबसे बड़ा लाभार्थी गुजरात ही है। अजय सिंह ने आरोप लगाया, केन्द्रीय गृहमंत्री की अध्यक्षता में हुई बैठक में मुख्यमंत्री मोहन यादव ने दबाव में समझौते पर हस्ताक्षर किए। उन्होंने मजबूती से मध्य प्रदेश का पक्ष नहीं रखा और प्रदेश के हितों की अनदेखी करते हुए चुपचाप समझौते पर साइन कर दिए। यह डूब क्षेत्र में आने वाले 192 गांवों के लोगों के साथ धोखा है। सरदार सरोवर बांध की उंचाई 58 मीटर तक बढ़ाने के निर्णय से मध्य प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र और राजस्थान में से मध्य प्रदेश सबसे ज्यादा प्रभावित हुआ है। डैम में डूबी साढ़े 37 हजार हेक्टेयर से अधिक भूमि का 55.50 प्रतिशत यानि 20 हजार हेक्टेयर से अधिक हिस्सा मध्य प्रदेश का है।

बाढ़ नियंत्रण है। इस परियोजना से गुजरात, राजस्थान, मध्य प्रदेश तथा महाराष्ट्र को लाभ प्राप्त होता है। दूसरी ओर, इस परियोजना के कारण हजारों परिवारों का विस्थापन, पर्यावरणीय क्षति और पुनर्वास संबंधी समस्याएँ भी सामने आईं। इन्हीं कारणों से यह परियोजना भारत के सबसे चर्चित विकासात्मक विवादों में शामिल रही है। नर्मदा भारत की प्रमुख पश्चिमवाहिनी नदियों में से एक है। इसका उद्गम मध्य प्रदेश के अमरकंटक से होता है। यह मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और गुजरात के लिए जल का प्रमुख स्रोत है। नर्मदा घाटी जैव विविधता, घने वनों और आदिवासी संस्कृति के लिए प्रसिद्ध है।

सरदार सरोवर परियोजना का विचार स्वतंत्रता से पहले ही सामने आ गया था। 1946 में नर्मदा नदी के विकास पर विचार प्रारंभ हुआ। वर्ष 1961 में तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने इस परियोजना की आधारशिला रखी। इसके बाद नर्मदा नदी के जल के बँटवारे को लेकर गुजरात, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और राजस्थान के बीच विवाद उत्पन्न हुआ।

सरदार सरोवर परियोजना का विचार स्वतंत्रता से पहले ही सामने आ गया था। 1946 में नर्मदा नदी के विकास पर विचार प्रारंभ हुआ। वर्ष 1961 में तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने इस परियोजना की आधारशिला रखी। इसके बाद नर्मदा नदी के जल के बँटवारे को लेकर गुजरात, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और राजस्थान के बीच विवाद उत्पन्न हुआ। इस विवाद के समाधान के लिए 1969 में नर्मदा जल विवाद न्यायाधिकरण का गठन किया

प्रभावितों के अधिकारों का घोर उल्लंघन

सरदार सरोवर परियोजना के कारण मध्यप्रदेश में जलमग्न हुई वन भूमि, शासकीय भूमि तथा अन्य सार्वजनिक संसाधनों की भरपाई का बढ़ा हुआ मुआवजा गुजरात सरकार ने न केवल देने से इंकार कर दिया है बल्कि अब नए समझौते में गुजरात सरकार को ही मध्यप्रदेश और महाराष्ट सरकार को क्रमश: 550 और 27 करोड़ का भुगतान करना तय हुआ है, यह सीधे तौर पर राज्य सरकारों और इस परियोजना से प्रभावितों के अधिकारों का घोर उल्लंघन है। यह अचानक कैसे हो गया जबकि पैसा तो पहले गुजरात सरकार को देना था और अब उसी को दूसरे राज्यों को देने की बात कही गई है।

मेधा पाटकर, कार्यकर्ता, नर्मदा बचाओ आंदोलन

गरीबों और आदिवासियों को कीमत चुकानी पड़ी

विकास की कीमत गरीबों और आदिवासियों को चुकानी पड़ी। पर्यावरणीय प्रभावों का सही आकलन नहीं किया गया। पुनर्वास योजनाएँ पर्याप्त नहीं थीं। स्थानीय लोगों की भागीदारी कम रही। विकास तभी सार्थक है जब वह सामाजिक न्याय और पर्यावरणीय संतुलन के साथ हो।

कमलेश पंवार, प्रभावित किसान

विकास और पर्यावरण का संतुलन जरूरी है

सरदार सरोवर परियोजना ने भारत में एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न खड़ा किया है। क्या विकास और पर्यावरण साथ-साथ चल सकते हैं? परियोजनाएं वही सफल मानी जाती है जो पर्यावरण और विकास का सही मूल्यांकन करके बनाई जाती हैं। केवल विकास के नाम विनाश की पटकथा नहीं लिखी जा सकती है। सरदार सरोवर बांध में अनेक पहलुओं को नजरअंदाज किया गया है।

जगदीश कौरव, सामाजिक कार्यकर्ता

गया। 1979 में न्यायाधिकरण ने अपना निर्णय दिया, जिसमें जल के बँटवारे, बाँध की ऊँचाई तथा पुनर्वास संबंधी दिशा-निर्देश निर्धारित किए गए। इसके बाद परियोजना का निर्माण आगे बढ़ा और वर्ष 2017 में बाँध का निर्माण पूर्ण हुआ। ऊँचाई लगभग 163 मीटर। पूर्ण जल स्तर 138.68 मीटर। इस परियोजना की नहर प्रणाली भारत की सबसे लंबी सिंचाई प्रणालियों में गिनी जाती है। परियोजना का सबसे बड़ा लाभ सिंचाई के क्षेत्र में हुआ है। गुजरात के कच्छ, सौराष्ट्र तथा उत्तर गुजरात जैसे सूखा प्रभावित क्षेत्रों में लाखों हेक्टेयर भूमि को सिंचाई सुविधा प्राप्त हुई। परियोजना के माध्यम से गुजरात के हजारों गाँवों तथा अनेक नगरों को स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराया गया है। शेषकर ऐसे क्षेत्रों में जहाँ भूजल खारा था या जल संकट गंभीर था, वहाँ नर्मदा का जल जीवनदायिनी सिद्ध हुआ। बड़ी मात्रा में जल विद्युत का उत्पादन होता है। इस बिजली का लाभ गुजरात, मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र को मिलता है।

लोकतंत्र की असली ताकत जनता

भारत में सामूहिक आंदोलनों की बदलती तस्वीर और उनके परिणाम

भारत का इतिहास केवल राजाओं, सरकारों और चुनावों का इतिहास नहीं है। यह उन करोड़ों लोगों का भी इतिहास है जिन्होंने अन्याय, भ्रष्टाचार, असमानता और व्यवस्था की खामियों के खिलाफ आवाज उठाई। यही आवाज़ कभी स्वतंत्रता संग्राम बनी, कभी संपूर्ण क्रांति, कभी भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन, कभी निर्भया आंदोलन और कभी किसान आंदोलन। लोकतंत्र की सबसे बड़ी शक्ति यही है कि जनता केवल वोट नहीं देती, बल्कि जब उसे लगता है कि उसकी बात नहीं सुनी जा रही, तब वह सड़कों पर उतरकर अपनी आवाज़ बुलंद करती है। लेकिन आज भारत एक ऐसे दौर से गुजर रहा है, जहां यह सवाल पहले से कहीं अधिक तीखा होकर सामने खड़ा है। क्या भारत में आंदोलनों की राह कठिन होती जा रही है? क्या अब विरोध दर्ज कराना पहले जितना आसान नहीं रहा? क्या लोकतंत्र में जनता की आवाज़ को सुनने का तरीका बदल गया है? या फिर बदलते समय के साथ आंदोलन भी बदल गए हैं? नीट में कथित अनियमितताओं को लेकर देशभर में छात्रों और अभिभावकों का व्यापक आक्रोश देखने को मिला। दिल्ली में शुरू हुए विरोध प्रदर्शनों ने यह संदेश दिया कि नई पीढ़ी अपने अधिकारों के प्रति पहले की तुलना में अधिक जागरूक हो चुकी है। छात्रों ने परीक्षा प्रक्रिया में पारदर्शिता और निष्पक्षता की मांग को लेकर लोकतांत्रिक तरीके से अपनी बात रखी। इस आंदोलन ने देशभर में परीक्षा प्रणाली की विश्वसनीयता पर गंभीर बहस को जन्म दिया और संबंधित एजेंसियों को कई स्तरों पर समीक्षा करने के लिए बाध्य किया। इन सवालों का उत्तर केवल राजनीति में नहीं, बल्कि भारत के युवाओं की आंखों में दिखाई देता है। देश का युवा, जो कभी रोजगार के लिए संघर्ष कर रहा है, कभी प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी में वर्षों लगा देता है, कभी सरकारी भर्तियों के इंतजार में अपनी उमर गुजार देता है, वह आज केवल नौकरी नहीं मांग रहा। वह निष्पक्ष व्यवस्था, पारदर्शिता और जवाबदेही भी मांग रहा है। यही कारण है कि पिछले कुछ वर्षों में छात्र आंदोलन केवल कैंपस तक सीमित नहीं रहे, बल्कि राष्ट्रीय विमर्श का हिस्सा बन गए। इसी पृष्ठभूमि में NEET परीक्षा को लेकर उठा आंदोलन भारतीय लोकतंत्र के इतिहास में एक महत्वपूर्ण मोड़ बनकर सामने आया। शुरुआत कुछ छात्रों की शिकायतों से हुई। फिर पेपर लीक, परीक्षा प्रक्रिया और पारदर्शिता को लेकर सवाल उठे। देखते-ही-देखते यह मुद्दा लाखों छात्रों, अभिभावकों, शिक्षकों और पूरे देश की चिंता बन गया। सोशल मीडिया पर अभियान शुरू हुए, सड़कों पर प्रदर्शन हुए, अदालतों में याचिकाएं दायर हुईं और संसद तक इस मुद्दे की गूंज पहुंची।

विजया पाठक

यह केवल एक परीक्षा का विवाद नहीं था, यह उस भरोसे का सवाल था, जिस पर करोड़ों युवाओं का टिका हुआ था भविष्य। जब किसी छात्र का एक-एक अंक उसके जीवन का निर्णय करता हो, जब एक परीक्षा के लिए वर्षों की मेहनत दांव पर लगी हो, तब परीक्षा की निष्पक्षता केवल प्रशासनिक विषय नहीं रह जाती, बल्कि यह सामाजिक न्याय और लोकतांत्रिक विश्वास का प्रश्न बन जाती है। यही कारण था कि इस आंदोलन ने धीरे-धीरे देश की सोच बदलनी शुरू कर दी। पहले यह चर्चा केवल परीक्षा तक सीमित थी। फिर सवाल उठा कि क्या प्रतियोगी परीक्षाओं की पूरी व्यवस्था सुरक्षित है? क्या पेपर लीक केवल एक घटना है या एक बड़ी समस्या का संकेत? क्या करोड़ों युवाओं के भविष्य की रक्षा के लिए व्यवस्था में व्यापक सुधार आवश्यक हैं?

क्या पेपर लीक केवल एक घटना है या एक बड़ी समस्या का संकेत? क्या करोड़ों युवाओं के भविष्य की रक्षा के लिए व्यवस्था में व्यापक सुधार आवश्यक हैं?

इन सवालों ने राष्ट्रीय बहस की दिशा बदल दी

सरकार ने जांच एजेंसियों को सक्रिय किया। विभिन्न स्तरों पर जांच शुरू हुई। कई लोगों की गिरफ्तारियां हुईं। परीक्षा प्रणाली में सुधारों की घोषणा की गई। राजनीतिक स्तर पर भी इस मुद्दे ने व्यापक चर्चा को जन्म दिया। विपक्ष ने जवाबदेही तय करने की मांग की। अंततः शिक्षा मंत्रालय में नेतृत्व परिवर्तन हुआ और तत्कालीन शिक्षा

जंतर मंतर पर छात्रों ने 06 जून 2026 से 25 जुलाई 2026 तक आंदोलन किया।

नीट परीक्षा का पेपर लीक मामला को लेकर उपजे जनआक्रोश का सबसे प्रमुख पहलू रहा शिक्षा मंत्री धर्मेन्द्र प्रधान का इस्तीफा। सीजेपी की भी पहली मांग धमेन्द्र प्रधान के इस्तीफे की थी। हालांकि शुरूआत में बीजेपी शिक्षा मंत्री के इस्तीफे से साफ इंकार करती रही, लेकिन जनाक्रोश के बढ़ते दबाव के चलते मोदी सरकार को बैकफुट पर आना पड़ा। गौरतलब है कि धमेन्द्र प्रधान बीजेपी के प्रमुख नेताओं में हैं। उन्होंने 2014 से ही कई महत्वपूर्ण जिम्मेदारियों का निर्वहन किया है। यही कारण था कि पार्टी अंत तक फैसला नहीं ले पा रही थी।

मंत्री धर्मेंद्र प्रधान ने इस्तीफा दिया। यह घटनाक्रम इस बात का संकेत बना कि शिक्षा से जुड़ा जनदबाव राष्ट्रीय राजनीति के केंद्र तक पहुंच चुका था। लेकिन इस आंदोलन की सबसे बड़ी उपलब्धि केवल राजनीतिक घटनाक्रम नहीं थी। सबसे बड़ा परिवर्तन यह था कि देश के करोड़ों युवाओं ने पहली बार महसूस कराया कि उनकी आवाज़ केवल सोशल मीडिया पोस्ट नहीं है। यदि वे संगठित होकर लोकतांत्रिक तरीके से अपनी बात रखें, तो पूरा देश उस पर चर्चा करने के लिए मजबूर हो सकता है। यहां एक महत्वपूर्ण प्रश्न भी उठता है। यदि आंदोलन इतना प्रभावशाली था, तो क्या इसका अर्थ यह है कि भारत में आंदोलन आसान हो गए हैं? उत्तर शायद नहीं है।

इस आंदोलन की सबसे बड़ी उपलब्धि केवल राजनीतिक घटनाक्रम नहीं थी। सबसे बड़ा परिवर्तन यह था कि देश के करोड़ों युवाओं ने पहली बार महसूस कराया कि उनकी आवाज़ केवल सोशल मीडिया पोस्ट नहीं है। यदि वे संगठित होकर लोकतांत्रिक तरीके से अपनी बात रखें, तो पूरा देश उस पर चर्चा करने के लिए मजबूर हो सकता है।

यही आधुनिक भारतीय लोकतंत्र की सबसे बड़ी विडंबना है

एक ओर संविधान नागरिकों को विरोध का अधिकार देता है, दूसरी ओर सरकार पर शांति और सुरक्षा बनाए रखने की जिम्मेदारी होती है। इसी संतुलन के बीच हर आंदोलन अपनी राह तलाशता है। फिर भी इतिहास बार-बार यह साबित करता है कि जब कोई आंदोलन केवल नारों तक सीमित नहीं रहता, बल्कि समाज के बड़े वर्ग की भावना बन जाता है, तब उसे अनदेखा करना आसान नहीं होता। स्वतंत्रता आंदोलन, जेपी आंदोलन, निर्भया आंदोलन, किसान आंदोलन और हाल के छात्र आंदोलनों ने अलग-अलग समय में यही संदेश दिया कि लोकतंत्र में जनता की आवाज़ अंततः राजनीतिक निर्णयों को प्रभावित कर सकती है। NEET आंदोलन ने भी एक बड़ा संदेश छोड़ा। भारत का युवा अब केवल परीक्षा देने वाला उम्मीदवार नहीं है, वह अपने अधिकारों, अपने भविष्य और व्यवस्था की जवाबदेही को लेकर भी सजग नागरिक है।

यह आंदोलन चाहे इतिहास में जिस नाम से दर्ज हो, लेकिन उसने एक तथ्य स्पष्ट कर दिया। भारत में लोकतंत्र की सबसे बड़ी ताकत आज भी जनता है। और जब जनता के साथ करोड़ों युवा खड़े हो जाएं, तो किसी भी मुद्दे को केवल प्रशासनिक फाइल में बंद रखना संभव नहीं रह जाता। यही इस आंदोलन की सबसे बड़ी विरासत है। इसने केवल एक परीक्षा पर सवाल नहीं उठाए, बल्कि पूरे देश को यह सोचने पर मजबूर कर दिया कि यदि युवाओं का विश्वास व्यवस्था से उठ गया, तो किसी भी राष्ट्र का भविष्य सुरक्षित नहीं रह सकता।

भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है। लोकतंत्र की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि इसमें अंतिम शक्ति

जनता के पास होती है। संविधान नागरिकों को अपनी बात रखने, विरोध दर्ज कराने और शांतिपूर्ण तरीके से आंदोलन करने का अधिकार देता है। यही कारण है कि भारत में समय-समय पर हुए सामूहिक आंदोलनों ने न केवल जनभावनाओं को अभिव्यक्ति दी है, बल्कि सरकारों को अपने निर्णयों पर पुनर्विचार करने के लिए भी मजबूर किया अन्य मामला-सामूहिक आंदोलन लोकतंत्र को जीवंत बनाए रखने का सबसे प्रभावी माध्यम बनकर सामने आया है।

दिल्ली में युवाओं ने किया शक्ति प्रदर्शन

हाल ही में राष्ट्रीय पात्रता सह प्रवेश परीक्षा (नीट) में कथित अनियमितताओं को लेकर देश भर में छात्रों और प्रणाली की विश्वसनीयता पर गंभीर बहस को जन्म दिया और संबंधित एजेंसियों को कई स्तरों पर समीक्षा करने के लिए बाध्य किया।

पहले भी सामूहिक आंदोलनों से हुए बड़े बदलाव

यदि इतिहास पर दृष्टि डालें तो स्पष्ट होता है कि भारत में जनता की एकजुटता ने

मोदी सरकार के दो वरिष्ठ मंत्री जेपी नड्डा और जितेन्द्र सिंह ने जन आंदोलन में मध्यस्थता की भूमिका निभाई। सीजेपी के नेताओं के साथ कई दौर की बैठके हुई और अंतिम फैसला इन्हीं बैठकों के बाद आया।

है। हाल के वर्षों में देश में कई ऐसे आंदोलन देखने को मिले हैं, जिन्होंने यह स्पष्ट कर दिया कि यदि जनता संगठित होकर किसी मुद्दे पर लोकतांत्रिक तरीके से आवाज़ उठाती है, तो सरकारों के लिए उसे अनदेखा करना आसान नहीं होता। चाहे वह शिक्षा से जुड़ा प्रश्न हो, किसानों का मुद्दा हो, रोजगार का विषय हो या जनहित से संबंधित कोई अभिभावकों का व्यापक आक्रोश देखने को मिला। दिल्ली में शुरू हुए विरोध प्रदर्शनों ने यह संदेश दिया कि नई पीढ़ी अपने अधिकारों के प्रति पहले की तुलना में अधिक जागरूक हो चुकी है। छात्रों ने परीक्षा प्रक्रिया में पारदर्शिता और निष्पक्षता की मांग को लेकर लोकतांत्रिक तरीके से अपनी बात रखी। इस आंदोलन ने देशभर में परीक्षा अनेक अवसरों पर सरकारों के निर्णयों की दिशा बदल दी है। लोकतंत्र में सत्ता का दायित्व केवल शासन करना नहीं, बल्कि जनता की भावनाओं और आवश्यकताओं को समझना भी होता है। जब सरकारें जनभावनाओं की अनदेखी करती हैं, तब आंदोलन लोकतांत्रिक सुधार का माध्यम बन जाते हैं।

किसानों ने भरी थी हुंकार

भारतीय लोकतंत्र में ऐसे अनेक ऐतिहासिक उदाहरण मौजूद हैं, जहां जनआंदोलनों ने शासन व्यवस्था को नई दिशा दी। सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण वर्ष 2020-21 का किसान आंदोलन है। केंद्र सरकार द्वारा लाए गए तीन कृषि कानूनों का देश के अनेक किसान संगठनों ने विरोध किया। लंबे समय तक चले इस आंदोलन में लाखों किसानों ने शांतिपूर्ण तरीके से अपनी मांगें सरकार के सामने रखीं। अंततः सरकार ने इन तीनों कृषि कानूनों को वापस लेने का निर्णय लिया। यह स्वतंत्र भारत के इतिहास की सबसे महत्वपूर्ण लोकतांत्रिक घटनाओं में से एक मानी जाती है, जिसने यह सिद्ध किया कि निरंतर संवाद और जनदबाव लोकतंत्र में नीति परिवर्तन का आधार बन सकते हैं।

लोकपाल बिल के लिए अन्ना हजारे ने किया था प्रदर्शन

इसी प्रकार 2011 में भ्रष्टाचार के विरुद्ध चला जनलोकपाल आंदोलन भी भारतीय लोकतंत्र का एक महत्वपूर्ण अध्याय है। सामाजिक कार्यकर्ता अन्ना हज़ारे के नेतृत्व में देशभर में लाखों लोगों ने भ्रष्टाचार के खिलाफ आवाज़ उठाई। इस आंदोलन ने पूरे देश में जनजागरण का वातावरण बनाया और सरकार को लोकपाल संबंधी कानून बनाने की दिशा में आगे बढ़ना पड़ा। यद्यपि आंदोलन की सभी मांगें पूरी नहीं हुईं, लेकिन इसने शासन में पारदर्शिता और जवाबदेही को राष्ट्रीय विमर्श का प्रमुख विषय बना दिया।

निर्भया कांड में युवाओं की हुंकार

वर्ष 2012 में दिल्ली में निर्भया कांड के बाद देशभर में अभूतपूर्व जनआक्रोश देखने को मिला। महिलाओं की सुरक्षा को लेकर हुए इस व्यापक आंदोलन के परिणामस्वरूप केंद्र सरकार ने आपराधिक कानूनों में संशोधन किया, महिलाओं के विरुद्ध अपराधों के लिए कठोर दंड का प्रावधान किया तथा न्यायिक प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बनाने की दिशा में कई कदम उठाए। यह आंदोलन इस बात का उदाहरण है कि सामाजिक चेतना कानून निर्माण को भी प्रभावित कर सकती है।

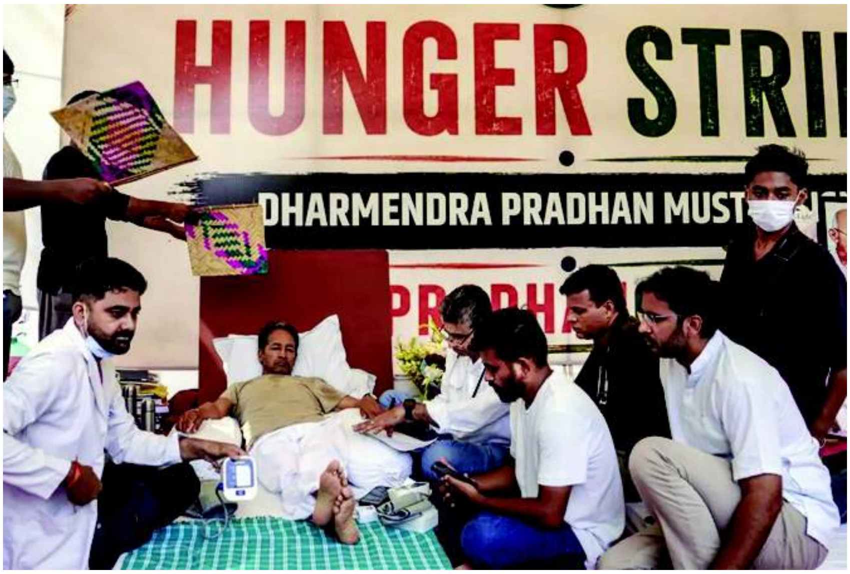

उज्जैन में किसानों ने उठाई थी आवाज

भूमि अधिग्रहण कानून में प्रस्तावित संशोधनों के विरुद्ध किसानों और सामाजिक संगठनों के विरोध ने भी केंद्र सरकार को अपने कदम पीछे खींचने पर मजबूर किया। इसी प्रकार विभिन्न राज्यों में आरक्षण, रोजगार, शिक्षा, पर्यावरण संरक्षण और स्थानीय अधिकारों को लेकर हुए आंदोलनों ने समय-समय पर सरकारों को अपनी नीतियों की समीक्षा करने के लिए विवश किया है। इन सभी उदाहरणों से स्पष्ट है कि लोकतंत्र केवल चुनावों तक सीमित व्यवस्था नहीं है। लोकतंत्र की वास्तविक शक्ति नागरिकों की सतत भागीदारी में निहित होती है। जब जनता अपने अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति सजग रहती है, तब शासन व्यवस्था अधिक उत्तरदायी बनती है। आंदोलन लोकतंत्र का विरोध नहीं, बल्कि उसकी आत्मा का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं, बशर्ते वे शांतिपूर्ण, संवैधानिक और जनहित पर आधारित हों।

यह भारत का लोकतंत्र है जिसे दबाना मुश्किल

आज प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी और गृहमंत्री अमित शाह भी लगातार लोकतंत्र को भारत की सबसे बड़ी ताकत बताते रहे हैं। वास्तव में लोकतंत्र तभी मजबूत होता है जब सरकार और जनता के बीच संवाद बना रहे। यदि जनता अपनी समस्याओं को लेकर सड़क से लेकर संसद तक अपनी बात पहुंचाने में सक्षम है, तो यह लोकतांत्रिक परिपक्वता का संकेत है। सरकारों को भी यह स्वीकार करना होगा कि आधुनिक भारत का नागरिक पहले की तुलना में कहीं अधिक जागरूक, शिक्षित और अधिकारों के प्रति सजग हो चुका है। डिजिटल मीडिया और सोशल मीडिया ने भी सामूहिक आंदोलनों को नई गति दी है। अब किसी भी मुद्दे पर कुछ ही समय में लाखों लोग एक मंच पर अपनी बात रख सकते हैं। हालांकि इसके साथ यह जिम्मेदारी भी जुड़ी है कि आंदोलन तथ्यों पर आधारित हों,

लोकपाल की मांग को लेकर अन्ना हजारे का आंदोलन 05 अप्रैल 2011 से 09 अप्रैल 2011 तक और 16 अगस्त 2011 से 28 अगस्त 2011 तक चला।

लोकतांत्रिक मर्यादाओं का पालन करें और हिंसा से पूरी तरह दूर रहें। शांतिपूर्ण आंदोलन न केवल जनसमर्थन प्राप्त करते हैं, बल्कि सरकारों पर नैतिक दबाव भी बनाते हैं। लोकतंत्र में सरकारें जनता द्वारा चुनी जाती हैं और उनका मूल दायित्व जनता के हितों की रक्षा करना होता है। इसलिए किसी भी नीति या कानून को लागू करते समय व्यापक संवाद, जनसुनवाई और संबंधित वर्गों से चर्चा आवश्यक है। यदि ऐसा नहीं होता, तो स्वाभाविक रूप से असंतोष जन्म लेता है और आंदोलन का स्वरूप ग्रहण कर लेता है। आज भारत का लोकतंत्र एक ऐसे दौर में है, जहां नागरिक केवल मतदाता बनकर नहीं रहना चाहते, बल्कि नीति निर्माण की प्रक्रिया में भी अपनी सहभागिता चाहते हैं। यही लोकतंत्र की सबसे बड़ी सफलता है। सरकारों को भी यह समझना होगा कि जनभावनाओं की अनदेखी करके लंबे समय तक कोई निर्णय लागू नहीं रखा जा सकता। संवाद, सहमति और पारदर्शिता ही सुशासन की पहचान हैं। भारत में सामूहिक आंदोलन लोकतंत्र की कमजोरी नहीं, बल्कि उसकी सबसे बड़ी ताकत हैं। जब जनता संविधान के दायरे में रहकर अपने अधिकारों के लिए संगठित होती है, तब शासन व्यवस्था अधिक संवेदनशील और उत्तरदायी बनती है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि चाहे किसानों का संघर्ष हो, छात्रों का आंदोलन हो, महिलाओं की सुरक्षा का प्रश्न हो या भ्रष्टाचार के विरुद्ध जनआक्रोश जनशक्ति ने अनेक बार सरकारों को अपने निर्णयों पर पुनर्विचार करने के लिए विवश किया है।

जंतर-मंतर का संदेश, युवाओं की आवाज़ को सुनने का समय

दिल्ली का जंतर-मंतर केवल एक ऐतिहासिक स्थल नहीं, बल्कि भारतीय लोकतंत्र में जनभावनाओं की अभिव्यक्ति का एक महत्वपूर्ण मंच भी है। जब भी देश के किसी वर्ग को लगता है कि उसकी बात पर्याप्त रूप से नहीं सुनी जा रही, तब जंतर-मंतर उसकी आवाज़ बनने का माध्यम बनता है। इन दिनों युवाओं का विरोध प्रदर्शन एक बार फिर इस प्रश्न को सामने

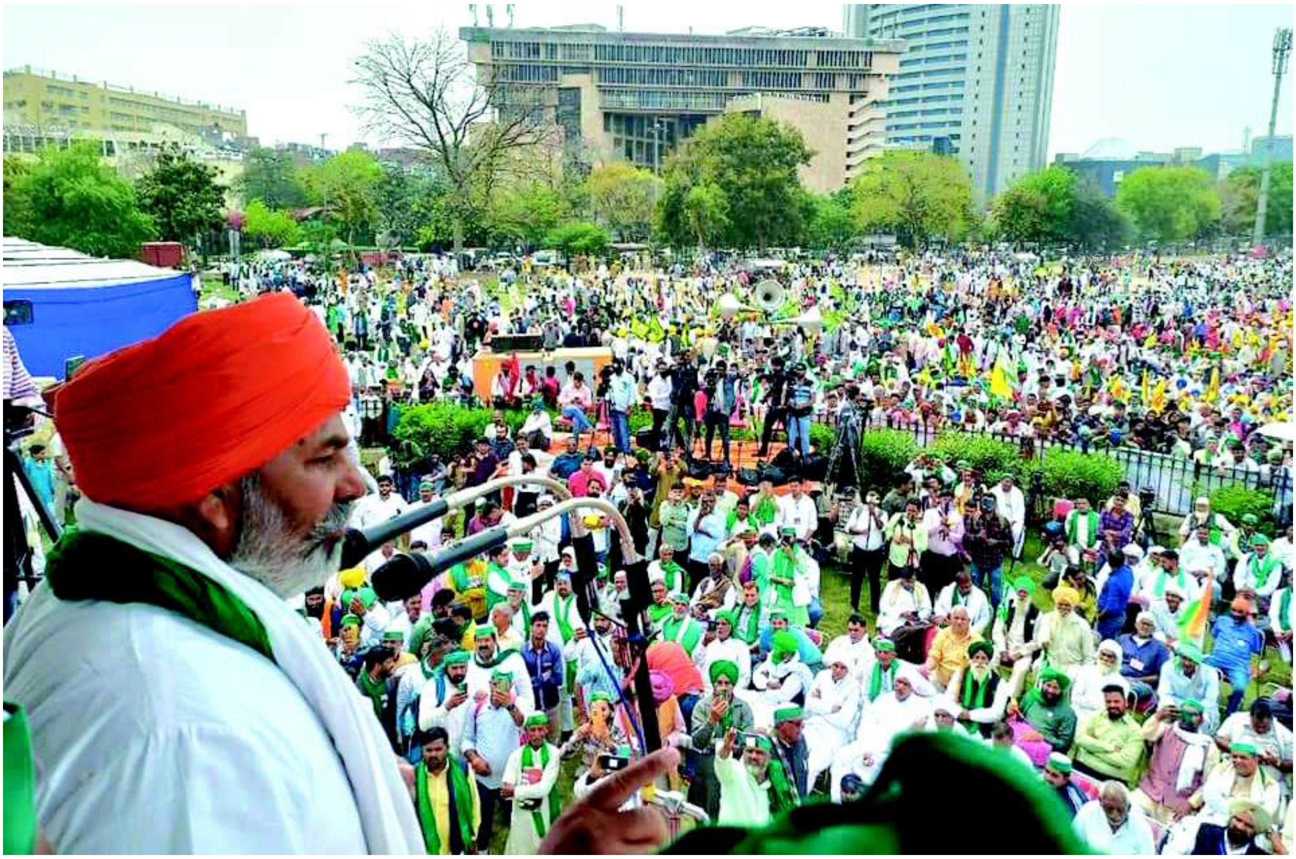

तीन कृषि कानूनों के विरोध में दिल्ली की सीमाओं पर किसान आंदोलन 26 नवंबर 2020 से शुरू हुआ 11 दिसम्बर 2021 को हुआ समाप्त।

ला रहा है कि देश की सबसे बड़ी युवा आबादी की अपेक्षाओं और सरकार की नीतियों के बीच कितना संतुलन स्थापित हो पा रहा है। भारत विश्व का सबसे युवा देशों में से एक है। यह युवा शक्ति देश की सबसे बड़ी पूंजी मानी जाती है। यही युवा आने वाले वर्षों में अर्थव्यवस्था, विज्ञान, तकनीक, शिक्षा, उद्योग और प्रशासन की दिशा तय करेंगे। ऐसे में यदि यही वर्ग अपनी समस्याओं को लेकर सड़कों पर उतरने के लिए विवश हो जाए, तो इसे केवल कानून-व्यवस्था का विषय मानना पर्याप्त नहीं होगा। इसके पीछे मौजूद कारणों को समझना और उनका समाधान तलाशना अधिक आवश्यक है। देशभर में युवाओं की प्रमुख चिंताओं में रोजगार, प्रतियोगी परीक्षाओं में पारदर्शिता, भर्ती प्रक्रियाओं में विलंब, परीक्षा पत्र लीक होने की घटनाएं, परिणाम घोषित होने में देरी और रिक्त पदों पर समय पर नियुक्तियां न होना शामिल हैं। वर्षों तक तैयारी करने वाले लाखों अभ्यर्थियों के लिए हर भर्ती प्रक्रिया केवल एक परीक्षा नहीं, बल्कि उनके भविष्य की उम्मीद होती है। जब यह प्रक्रिया किसी कारण से प्रभावित होती है, तो उसका सीधा असर उनके आत्मविश्वास और भविष्य की योजनाओं पर पड़ता है।

लोकतंत्र की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि प्रत्येक नागरिक को अपनी बात शांतिपूर्ण और संवैधानिक तरीके से रखने का अधिकार प्राप्त है। यदि युवा शांतिपूर्ण ढंग से अपनी मांगों को सामने रख रहे हैं, तो उनके साथ संवाद स्थापित करना सरकार और प्रशासन दोनों की जिम्मेदारी है। दूसरी ओर, प्रदर्शनकारियों की भी यह जिम्मेदारी है कि उनका आंदोलन पूरी तरह शांतिपूर्ण रहे और किसी भी प्रकार से सार्वजनिक व्यवस्था या आम नागरिकों के जीवन को प्रभावित न करे। युवाओं की समस्याओं का समाधान केवल घोषणाओं से संभव नहीं है। इसके लिए समयबद्ध भर्ती कैलेंडर, पारदर्शी परीक्षा प्रणाली, आधुनिक तकनीक के माध्यम से परीक्षा सुरक्षा, रिक्त पदों पर शीघ्र नियुक्ति और शिकायतों के त्वरित निवारण जैसी ठोस व्यवस्थाओं की आवश्यकता है।

मध्यप्रदेश में मूंग की एमएसपी खरीद को लेकर किसानों ने जुलाई 2026 में किया आंदोलन।

पिछले कुछ वर्षों में विभिन्न स्तरों पर भर्ती प्रक्रियाओं में सुधार के प्रयास हुए हैं, लेकिन अभी भी कई ऐसे क्षेत्र हैं जहां सुधार की गति अपेक्षाओं के अनुरूप नहीं मानी जा रही है। सरकारों के सामने चुनौती केवल रोजगार उपलब्ध कराना नहीं, बल्कि युवाओं के विश्वास को भी बनाए रखना है। जब किसी परीक्षा में अनियमितता या विलंब की खबर सामने आती है, तो उसका प्रभाव लाखों अभ्यर्थियों के मनोबल पर पड़ता है। इसलिए यह आवश्यक है कि संबंधित संस्थाएं अधिक पारदर्शी, जवाबदेह और समयबद्ध तरीके से कार्य करें।

देश का भविष्य उसके युवाओं के हाथों में है। इसलिए युवाओं का विश्वास बनाए रखना किसी भी सरकार की प्राथमिक जिम्मेदारी होनी चाहिए। संवाद, पारदर्शिता, समयबद्ध निर्णय और संवेदनशील प्रशासन ही ऐसे उपाय हैं, जिनसे जंतर-मंतर जैसे आंदोलनों की आवश्यकता धीरे-धीरे कम हो सकती है। लोकतंत्र की वास्तविक सफलता तब मानी जाएगी जब युवाओं को अपने अधिकारों और अवसरों के लिए सड़कों पर उतरने के बजाय व्यवस्था पर पूर्ण विश्वास हो।

मध्यप्रदेश में किसानों का सामूहिक प्रदर्शन

दिल्ली के बाद सामूहिक आंदोलन की यह भावना मध्यप्रदेश की राजधानी भोपाल तक भी पहुंची। यहां किसानों ने डीएपी और यूरिया की कमी, मूंग खरीद में सीमित कोटा तथा सरकार के उदासीन रवैये के विरोध में चक्काजाम और व्यापक प्रदर्शन किए। किसानों का कहना था कि उनकी उपज की खरीद और खेती के लिए आवश्यक उर्वरकों की उपलब्धता सुनिश्चित करना सरकार की प्राथमिक जिम्मेदारी है। आंदोलन के दबाव और किसानों की एकजुटता का परिणाम यह हुआ कि मध्यप्रदेश सरकार को महज दो दिनों के भीतर किसानों की प्रमुख मांगों पर सकारात्मक निर्णय लेना पड़ा। सरकार ने मूंग खरीद के नियमों में संशोधन करते हुए खरीद का कोटा बढ़ाने का निर्णय लिया। यह घटना इस बात का उदाहरण है कि लोकतांत्रिक व्यवस्था में शांतिपूर्ण और संगठित आंदोलन किस प्रकार नीतिगत बदलाव का कारण बन सकते हैं।

मुझे भी कई बड़े आंदोलन का नेतृत्व का मिला मौका

मध्यप्रदेश की राजनीति में भी ऐसा एक महत्वपूर्ण उदाहरण देखने को मिला। 1990 के दशक में तत्कालीन मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह के कार्यकाल के दौरान सोम डिस्टिलरी को शराब दुकानों के आवंटन को लेकर व्यापक असंतोष था। उस समय इस व्यवस्था के विरोध में जनस्तर पर मजबूत आवाज़ उठाई गई। लगातार विरोध और आंदोलन के परिणामस्वरूप तत्कालीन सरकार को अपने निर्णय पर पुनर्विचार करना पड़ा तथा शराब दुकानों के आवंटन की प्रक्रिया में बदलाव करना पड़ा। यह घटना दर्शाती है कि यदि किसी मुद्दे पर जनता संगठित होकर लोकतांत्रिक तरीके से विरोध दर्ज कराए, तो सरकारें भी अपने निर्णयों में परिवर्तन करने के लिए बाध्य हो सकती हैं। उसके बाद नर्मदा बचाओ समिति की मेधा पाटकर के साथ मिलकर नर्मदा नदी बचाने की मुहिम में भी शामिल होने का अवसर मिला।

भाजपा के लिए दतिया चुनाव हारने के क्या हैं मायने?

विजया पाठक

लोकतांत्रिक राजनीति में किसी भी चुनाव का परिणाम केवल हार और जीत तक सीमित नहीं होता। प्रत्येक चुनाव अपने भीतर कई राजनीतिक, सामाजिक और संगठनात्मक संकेत छिपाए होता है। मध्य प्रदेश के राजनीतिक परिदृश्य में दतिया का विशेष महत्व रहा है। दतिया में भाजपा की हार का अर्थ केवल एक सीट का नुकसान नहीं है। यह मतदाताओं की बदलती सोच, स्थानीय नेतृत्व की जवाबदेही, संगठन की सक्रियता, सामाजिक समीकरणों और लोकतांत्रिक चेतना का संकेत है। यह परिणाम भाजपा के लिए आत्ममंथन का अवसर है और विपक्ष के लिए अपनी राजनीतिक विश्वसनीयता को मजबूत करने की चुनौती। यदि इस चुनावी संदेश को गंभीरता से समझा गया, तो यह केवल दतिया ही नहीं बल्कि पूरे मध्य प्रदेश की भविष्य की राजनीति को प्रभावित करने वाला महत्वपूर्ण पड़ाव सिद्ध हो सकता है। बुंदेलखंड क्षेत्र का यह जिला लंबे समय से भाजपा का मजबूत गढ़ माना जाता रहा है। ऐसे में यदि दतिया में भाजपा को चुनावी हार का सामना करना पड़ा है, तो यह केवल एक सीट का नुकसान नहीं, बल्कि कई स्तरों पर राजनीतिक संदेश देने वाली घटना है। इस हार के दूरगामी प्रभाव संगठन, नेतृत्व, मतदाता मनोविज्ञान और भविष्य की चुनावी रणनीति पर पड़ सकते हैं। यह लगातार दूसरी बार है जब दतिया विधानसभा सीट पर बीजेपी को हार का सामना करना पड़ा है। 2023 के

विधानसभा चुनाव में कांग्रेस के राजेंद्र भारती ने नरोत्तम मिश्रा को हराया था और अब उपचुनाव में भी बीजेपी यह सीट वापस नहीं जीत पाई। दिलचस्प यह है कि दतिया में हुआ उपचुनाव सरकार बदलने वाला नहीं था। विधानसभा में बीजेपी के बहुमत पर इसका कोई असर नहीं पड़ेगा। इसके बावजूद दोनों दलों ने इस सीट पर पूरी ताकत झोंक दी। सबसे पहले यह समझना आवश्यक है कि किसी भी राजनीतिक दल की लगातार जीत उसके कार्यकर्ताओं में आत्मविश्वास पैदा करती है, जबकि हार आत्ममंथन का अवसर देती है। दतिया में भाजपा की हार यह संकेत देती है कि केवल पिछले चुनावों की सफलता के आधार पर भविष्य की जीत सुनिश्चित नहीं की जा सकती। मतदाता अब पहले की तुलना में अधिक जागरूक और अपेक्षाकृत स्वतंत्र निर्णय लेने वाले हो गए हैं। वे विकास, स्थानीय नेतृत्व, जनसंपर्क और समस्याओं के समाधान के आधार पर अपना मतदान व्यवहार बदलने में संकोच नहीं करते।

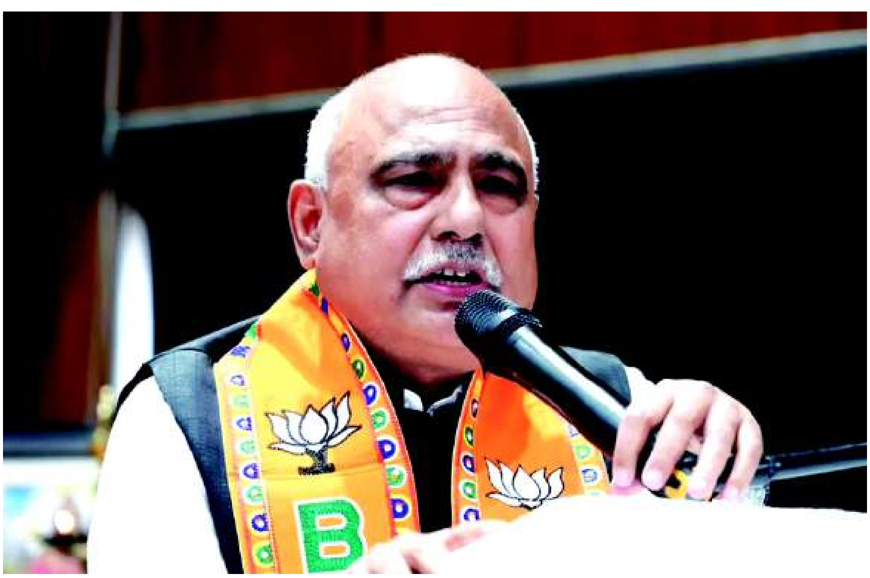

दतिया की हार का सबसे बड़ा संदेश स्थानीय नेतृत्व को लेकर सामने आता है। अक्सर देखा गया है कि राष्ट्रीय और प्रदेश स्तर पर मजबूत छवि होने के बावजूद यदि स्थानीय जनप्रतिनिधि जनता से संवाद बनाए रखने में असफल रहते हैं, तो इसका सीधा असर चुनाव परिणाम पर पड़ता है। यदि मतदाताओं को लगता है कि उनका विधायक या स्थानीय नेतृत्व उनकी समस्याओं के प्रति संवेदनशील नहीं है, तो वे परिवर्तन का विकल्प चुनते हैं। इस दृष्टि से दतिया का परिणाम भाजपा के लिए स्थानीय नेतृत्व की समीक्षा का अवसर बन सकता है।

दूसरा महत्वपूर्ण पहलू संगठनात्मक सक्रियता का है। भाजपा अपनी मजबूत बूथ संरचना और अनुशासित संगठन के लिए जानी जाती है। यदि इतने मजबूत संगठन के बावजूद हार हुई है, तो इसका अर्थ है कि या तो संगठनात्मक समन्वय में कमी रही या फिर कार्यकर्ताओं में अपेक्षित उत्साह दिखाई नहीं दिया। कई बार टिकट वितरण से उत्पन्न असंतोष, गुटबाजी अथवा कार्यकर्ताओं की नाराजगी भी चुनाव परिणामों को प्रभावित करती है। ऐसे में संगठन को यह देखना होगा कि क्या सभी स्तरों पर कार्यकर्ता एकजुट होकर चुनाव लड़ रहे थे या नहीं।

दतिया की हार सत्ता विरोधी रुझान (एंटी-इन्कम्बेंसी) की ओर भी संकेत कर सकती है। लंबे समय तक सत्ता में रहने वाली किसी भी सरकार के सामने जनता की अपेक्षाएँ लगातार बढ़ती जाती हैं। यदि सड़क, बिजली, पानी, रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य और कृषि जैसे मूलभूत मुद्दों पर लोगों को अपेक्षित सुधार नहीं दिखाई देता, तो मतदाता सत्ता पक्ष के विरुद्ध मतदान कर सकता है। इसलिए भाजपा के लिए यह परिणाम एक चेतावनी के रूप में देखा जा

सकता है कि विकास कार्यों के साथ-साथ उनकी प्रभावी पहुँच भी जनता तक सुनिश्चित करनी होगी।

इस चुनाव परिणाम का एक सामाजिक पक्ष भी है। मध्य प्रदेश की राजनीति में जातीय और सामाजिक समीकरण हमेशा महत्वपूर्ण भूमिका निभाते रहे हैं। यदि किसी विशेष वर्ग, समुदाय या युवा मतदाताओं का झुकाव विपक्ष की ओर बढ़ा है, तो भाजपा को अपने सामाजिक आधार का पुनर्मूल्यांकन करना होगा। बदलते सामाजिक समीकरणों को समझे बिना भविष्य की चुनावी रणनीति सफल नहीं हो सकती।

युवाओं की भूमिका आज के चुनावों में निर्णायक होती जा रही है। दतिया जैसे क्षेत्रों में बड़ी संख्या में प्रथम बार मतदान करने वाले मतदाता चुनाव प्रक्रिया में शामिल होते हैं। यदि यह वर्ग रोजगार, शिक्षा, प्रतियोगी परीक्षाओं, डिजिटल सुविधाओं और स्थानीय अवसरों को लेकर असंतुष्ट रहा होगा, तो उसका प्रभाव चुनाव परिणाम में दिखाई देना स्वाभाविक है। भाजपा के लिए यह आवश्यक होगा कि वह युवाओं की आकांक्षाओं के अनुरूप अपनी नीतियों और संवाद शैली को और अधिक प्रभावी बनाए।

महिलाओं का मतदान व्यवहार भी लगातार बदल रहा है। विभिन्न सरकारी योजनाओं के बावजूद यदि स्थानीय स्तर पर महिलाओं की सुरक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और स्व-सहायता समूहों से जुड़े मुद्दों का समाधान प्रभावी ढंग से नहीं हुआ, तो इसका असर मतदान पर पड़ सकता है। इसलिए दतिया का परिणाम महिला मतदाताओं के बदलते रुझान को समझने का भी अवसर है। विपक्ष के लिए यह जीत केवल एक सीट की सफलता नहीं बल्कि मनोवैज्ञानिक बढ़त का प्रतीक हो सकती है। लंबे समय तक किसी क्षेत्र में मजबूत रहे दल को हराना विपक्ष के कार्यकर्ताओं में नया उत्साह पैदा करता है। इससे विपक्ष भविष्य के चुनावों में अधिक आक्रामक रणनीति अपनाने के लिए प्रेरित होता है। यदि विपक्ष इस जीत को संगठन विस्तार और जनसंपर्क अभियान से जोड़ने में सफल रहता है, तो आने वाले चुनावों में भाजपा के सामने चुनौती और बढ़ सकती है।

महिलाओं का मतदान व्यवहार भी लगातार बदल रहा है। विभिन्न सरकारी योजनाओं के बावजूद यदि स्थानीय स्तर पर महिलाओं की सुरक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और स्व-सहायता समूहों से जुड़े मुद्दों का समाधान प्रभावी ढंग से नहीं हुआ, तो इसका असर मतदान पर पड़ सकता है।

हालाँकि यह भी ध्यान रखना चाहिए कि किसी एक चुनाव परिणाम के आधार पर पूरे प्रदेश की राजनीतिक दिशा तय नहीं की जा सकती। कई बार स्थानीय मुद्दे इतने प्रभावी होते हैं कि वे राष्ट्रीय या प्रदेश स्तर की राजनीतिक लहर को भी प्रभावित कर देते हैं। इसलिए दतिया की हार को प्रदेशव्यापी जनमत का अंतिम संकेत मानना उचित नहीं होगा। फिर भी यह परिणाम भाजपा के लिए एक महत्वपूर्ण राजनीतिक संदेश अवश्य है।

भाजपा के सामने अब सबसे बड़ी चुनौती इस संदेश को समझने की होगी। यदि पार्टी इस हार को केवल परिस्थितिजन्य मानकर अनदेखा करती है, तो भविष्य में कठिनाइयाँ बढ़ सकती हैं। लेकिन यदि इसे आत्मविश्लेषण का अवसर मानकर संगठन को मजबूत किया जाए, स्थानीय नेतृत्व में आवश्यक परिवर्तन किए जाएँ, कार्यकर्ताओं का मनोबल बढ़ाया जाए और जनता से सीधे संवाद की प्रक्रिया तेज की जाए, तो यह हार भविष्य की सफलता का आधार भी बन सकती है। राजनीतिक दृष्टि से देखें तो लोकतंत्र की यही विशेषता है कि कोई भी दल स्थायी विजेता या स्थायी पराजित नहीं होता। जनता समय-समय पर अपने अनुभवों और अपेक्षाओं के आधार पर निर्णय बदलती रहती है। इसलिए प्रत्येक चुनाव राजनीतिक दलों के लिए जनता के संदेश को समझने का माध्यम होता है। दतिया का परिणाम भी इसी दृष्टि से महत्वपूर्ण है। भाजपा यदि इस हार से सीख लेकर स्थानीय समस्याओं के समाधान, विकास कार्यों की गति, संगठनात्मक मजबूती और जनसंपर्क पर विशेष ध्यान देती है, तो वह भविष्य में अपनी स्थिति पुनः मजबूत कर सकती है। वहीं विपक्ष के लिए भी यह चुनौती होगी कि वह चुनावी जीत को स्थायी जनविश्वास में बदल सके। केवल सत्ता परिवर्तन ही पर्याप्त नहीं होता; जनता अपेक्षा करती है कि उसके जीवन में वास्तविक सुधार दिखाई दे।

कांग्रेस में ऊर्जा का संचार करेगी दतिया की जीत

दतिया में मिली चुनावी जीत कांग्रेस के लिए केवल एक राजनीतिक सफलता नहीं है, बल्कि यह लंबे समय से मनोवैज्ञानिक बढ़त बनाए हुए प्रतिद्वंद्वी के सामने आत्मविश्वास की पुर्नस्थापना का अवसर भी है। लोकतंत्र में चुनावी जीत और हार का

महत्व केवल सीटों की संख्या तक सीमित नहीं होता, बल्कि वह कार्यकर्ताओं के मनोबल, संगठन की सक्रियता और भविष्य की राजनीतिक दिशा को भी प्रभावित करता है। दतिया की जीत कांग्रेस के लिए ऐसे ही कई सकारात्मक संदेश लेकर आई है। पिछले कुछ वर्षों में मध्य प्रदेश की राजनीति में भाजपा का प्रभाव लगातार मजबूत रहा है। ऐसे माहौल में यदि कांग्रेस किसी महत्वपूर्ण क्षेत्र में जीत दर्ज करती है, तो उसका प्रभाव पूरे संगठन पर पड़ता है। दतिया की जीत कांग्रेस के कार्यकर्ताओं को यह विश्वास दिलाती है कि यदि संगठन एकजुट होकर जनता के बीच सक्रिय रहे और स्थानीय मुद्दों को प्रभावी ढंग से उठाए, तो भाजपा जैसी मजबूत पार्टी को भी चुनौती दी जा सकती है।

इस जीत का सबसे बड़ा लाभ कांग्रेस के बूथ स्तर के कार्यकर्ताओं को मिलेगा। चुनावी पराजयों के बाद अक्सर कार्यकर्ताओं में निराशा और निष्क्रियता आ जाती है। लेकिन दतिया की सफलता उनके भीतर नया उत्साह पैदा करेगी। कार्यकर्ता

इस जीत का सबसे बड़ा लाभ कांग्रेस के बूथ स्तर के कार्यकर्ताओं को मिलेगा। चुनावी पराजयों के बाद अक्सर कार्यकर्ताओं में निराशा और निष्क्रियता आ जाती है। लेकिन दतिया की सफलता उनके भीतर नया उत्साह पैदा करेगी।

अधिक सक्रियता से जनसंपर्क अभियान चलाएंगे, नए सदस्यों को जोड़ेंगे और आगामी चुनावों की तैयारी में अधिक ऊर्जा के साथ जुटेंगे। किसी भी राजनीतिक दल की वास्तविक ताकत उसके जमीनी कार्यकर्ता होते हैं और यह जीत उनके आत्मविश्वास को निश्चित रूप से बढ़ाएगी। दतिया का परिणाम यह भी संकेत देता है कि जनता स्थानीय मुद्दों को गंभीरता से देख रही है। यदि कांग्रेस ने जनता की समस्याओं को प्रभावी ढंग से उठाया और उसका राजनीतिक लाभ मिला, तो यह मॉडल अन्य जिलों में भी अपनाया जा सकता है। इससे पार्टी केवल सरकार की आलोचना तक सीमित नहीं रहेगी, बल्कि जनहित के मुद्दों पर सकारात्मक विकल्प के रूप में अपनी पहचान मजबूत कर सकेगी। यह जीत कांग्रेस नेतृत्व के लिए भी राहत का

विषय होगी। अक्सर संगठन की मजबूती का आकलन चुनाव परिणामों से किया जाता है। दतिया की सफलता से प्रदेश नेतृत्व को अपने संगठनात्मक प्रयासों पर भरोसा बढ़ेगा। साथ ही यह संदेश भी जाएगा कि यदि उम्मीदवार चयन, स्थानीय रणनीति और संगठनात्मक समन्वय सही हो, तो कांग्रेस बेहतर प्रदर्शन कर सकती है। दतिया की जीत का प्रभाव आगामी चुनावों की रणनीति पर भी दिखाई देगा। कांग्रेस अब उन क्षेत्रों में अधिक मजबूती से अभियान चलाने का प्रयास करेगी, जहाँ उसे पहले कमजोर माना जाता था। यह जीत पार्टी के लिए राजनीतिक विस्तार का आधार बन सकती है। इसके साथ ही विपक्षी राजनीति में कांग्रेस की भूमिका और अधिक प्रभावशाली बनने की संभावना भी बढ़ेगी। हालाँकि कांग्रेस के लिए यह भी आवश्यक है कि वह इस जीत को केवल उत्सव का विषय न बनाए। एक चुनावी सफलता स्थायी जनसमर्थन की गारंटी नहीं होती। जनता का विश्वास बनाए रखने के लिए निरंतर जनसंपर्क, संगठनात्मक मजबूती और जनहित के मुद्दों पर सक्रियता आवश्यक होगी। यदि पार्टी आत्मसंतुष्टि का शिकार होती है, तो यह बढ़त जल्दी समाप्त भी हो सकती है।

राजनीति में प्रत्येक जीत नई जिम्मेदारी लेकर आती है। दतिया की जीत कांग्रेस को यह अवसर देती है कि वह अपने संगठन को और अधिक मजबूत बनाए, युवा नेतृत्व को आगे लाए तथा जनता के बीच विश्वास का वातावरण तैयार करे। यदि पार्टी इस सफलता को व्यापक जनआंदोलन और सकारात्मक राजनीतिक अभियान में बदलने में सफल रहती है, तो इसका लाभ भविष्य के चुनावों में भी मिल सकता है। निस्संदेह, दतिया की जीत कांग्रेस के लिए एक नई शुरुआत का संकेत है। इसने कार्यकर्ताओं में नई ऊर्जा का संचार किया है, नेतृत्व का आत्मविश्वास बढ़ाया है और यह संदेश दिया है कि लोकतंत्र में जनता का विश्वास निरंतर मेहनत और जनसरोकारों से ही अर्जित किया जा सकता है। यदि कांग्रेस इस ऊर्जा को संगठनात्मक शक्ति में बदलने में सफल रहती है, तो दतिया की यह जीत आने वाले समय में उसके लिए एक महत्वपूर्ण राजनीतिक मील का पत्थर साबित हो सकती है।

हार पर क्या केवल कार्यकर्ता ही जिम्मेदार?

दतिया उपचुनाव में भाजपा की हार के बाद सबसे बड़ा सवाल जवाबदेही को लेकर उठ रहा है। राजनीतिक हलकों में चर्चा है कि उम्मीदवार चयन का अंतिम निर्णय राष्ट्रीय अध्यक्ष नितिन नबीन का था। ऐसे में यदि टिकट चयन की प्रक्रिया में नितिन नबीन, मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव और प्रदेश अध्यक्ष हेमंत खंडेलवाल की महत्वपूर्ण भूमिका रही, तो हार के बाद केवल स्थानीय संगठन और जमीनी कार्यकर्ताओं को जिम्मेदार ठहराना कितना उचित है? राजनीतिक विश्लेषकों का मानना है कि यदि शीर्ष नेतृत्व ने आशुतोष तिवारी के नाम पर अंतिम मुहर लगाई थी, तो चुनाव परिणाम की नैतिक और राजनीतिक जिम्मेदारी भी शीर्ष स्तर पर तय होनी चाहिए। केवल मंडल, जिला और बूथ स्तर के कार्यकर्ताओं पर कार्रवाई या संगठनात्मक बदलाव की चर्चा यह संदेश देती है कि निर्णय ऊपर लिए जाते हैं, लेकिन जवाबदेही नीचे तय होती है। अब आवश्यकता इस बात की है कि टिकट चयन, चुनावी रणनीति और स्थानीय राजनीतिक परिस्थितियों का निष्पक्ष मूल्यांकन किया जाए। यदि समीक्षा केवल कार्यकर्ताओं तक सीमित रही और शीर्ष स्तर के निर्णयों पर सवाल नहीं उठे, तो संगठन के भीतर असंतोष बढ़ सकता है और भविष्य के चुनावों पर भी इसका प्रभाव पड़ सकता है।

समृद्ध किसान समृद्ध प्रदेश
किसान कल्याण वर्ष 2026
बलराम कृषि महोत्सव
15 जुलाई से 13 नवंबर 2026
नरेन्द्र मोदी, प्रधानमंत्री
मध्यप्रदेश में आधुनिक तकनीक और नवाचारों से कृषि समृद्धि की पहल
किसान संवाद
सुझावों का आदान-प्रदान
सम्मान का गौरवपूर्ण मंच
उत्कृष्ट किसान, विद्यार्थी एवं सोशल मीडिया इन्फ्लुएंसर्स का सम्मान
आधुनिक कृषि का प्रदर्शन
उन्नत कृषि तकनीकों की नवीनतम जानकारियां
कृषि और संस्कृति का अनुपम संगम
देशभक्ति गीत, लोकनृत्य और सांस्कृतिक प्रस्तुतियां
किसानों के हित में विभागों द्वारा कार्य
उद्यानिकी तथा खाद्य प्रसंस्करण
उद्यानिकी का रकबा 30 लाख हेक्टेयर एवं उत्पादन 490 लाख मीट्रिक टन बढ़ाने का लक्ष्य
राजस्व
कृषि भूमि के भू-अर्जन पर बाजार दर से 4 गुना मुआवजा देने का निर्णय
पीएम किसान सम्मान, मुख्यमंत्री किसान कल्याण में सालाना ₹12000 की सहायता
ऊर्जा
किसानों को ₹5 में बिजली के स्थाई कनेक्शन एवं 10 हॉर्सपावर तक ऊर्जा प्रभार पर सब्सिडी
सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम
खाद्य प्रसंस्करण उद्योग को बढ़ावा देने हेतु 60% तक प्रोत्साहन
नवीन एवं नवीकरणीय ऊर्जा
पीएम कुसुम योजना में 32 लाख किसानों को सोलर पंप देने का लक्ष्य
कुटीर एवं ग्रामोद्योग
महिला एवं ग्रामीण युवाओं को कुटीर उद्योग से जोड़कर स्वरोज़गार को बढ़ावा
मध्यप्रदेश पर्यटन
ग्रामीण पर्यटन को प्रोत्साहन 1000 होम-स्टे बनाने का लक्ष्य
जनसम्पर्क
कृषक कल्याणकारी योजनाओं एवं कार्यक्रमों का व्यापक प्रचार-प्रसार
पशुपालन एवं डेयरी
दुग्ध संकलन प्रतिदिन 12 लाख लीटर से बढ़ाकर 50 लाख लीटर करने का लक्ष्य
सहकारिता
5,562 दुग्ध समितियों का वित्तीय समावेशन कर 83 हजार सदस्यों के जिला सहकारी बैंकों में खाते खोले गए
0% ब्याज दर पर फसल ऋण, भुगतान के लिए साल भर का समय
औद्योगिक नीति एवं निवेश प्रोत्साहन
कृषि-आधारित उद्योगों की स्थापना पर 50% तक सब्सिडी
मछुआ कल्याण तथा मत्स्य विकास
₹6000 करोड़ के मत्स्य निर्यात का लक्ष्य, ₹12400 करोड़+ का आ रहा निवेश
जल संसाधन
55 लाख हेक्टेयर में सिंचाई को वर्ष 2028-29 तक 100 लाख हेक्टेयर करने का लक्ष्य
नर्मदा घाटी विकास
नर्मदा बेसिन प्रोजेक्ट्स के माध्यम से सिंचाई परियोजनाओं को वित्तपोषण
संस्कृति
श्रीअन्न, ग्रामीण व्यंजन एवं स्थानीय परम्पराओं को प्रोत्साहन

जो कहा
वो किया
जो सोचा वो हुआ
क्या हिंदू क्या मुसलमान, क्या राम क्या रहीम,
क्या रविन्दर क्या रॉबर्ट सबके लिये समान कानून
मात्र 2 माह में 27 अप्रैल 2026 को उच्च स्तरीय समिति
गठन के बाद, 21 जुलाई 2026 को विधानसभा में ऐतिहासिक मंजूरी
विधानसभा में पारित
समान नागरिक
संहिता
27 अप्रैल 2026
उच्च स्तरीय समिति
का गठन
7 सदस्यीय उच्च स्तरीय समिति द्वारा देश के विभिन्न कानूनों और अन्य राज्यों के UCC मॉडलों का गहन तुलनात्मक अध्ययन
अभूतपूर्व जन-भागीदारी
सुझाव हेतु वेब पोर्टल लॉन्च
3.50 करोड़
संदेश नागरिकों को भेजे गए
10 लाख सुझाव मिले
मध्यप्रदेश के विधायी इतिहास में पहली बार
जिला और राज्य स्तर पर
50+ वृहद बैठकें
व्यावहारिक सुझाव संकलित
1,134+
ऐतिहासिक जनसमर्थन
93%
ने समान नागरिक संहिता का समर्थन किया
92%
पुरुष और महिलाएं समान कानून के पक्ष में
लैंगिक समानता और
अधिकार
91%
ने भेदभावपूर्ण तलाक कानून हटाने का समर्थन किया
92%
ने बेटियों और माताओं को संपत्ति में समान अधिकार का समर्थन किया
सर्वसमुदाय का
समर्थन
हिन्दू: 95% पुरुष
96% महिलाएं
मुस्लिम: 40% पुरुष
80% महिलाएं
ईसाई: 90% पुरुष
95% महिलाएं
सिख: 93% पुरुष
96% महिलाएं
21 जुलाई 2026
विधानसभा
में पारित
प्रदेश की आधी आबादी, सभी बहनों को, दिया उनका हक़

बलूचिस्तान में स्वघोषित आजादी

प्रमोद भार्गव

> पाकिस्तान से आजादी की लड़ाई लड़ रहे संगठनों ने बलूचिस्तान को स्वतंत्र राष्ट्र घोषित कर दिया है। अपना नया झंडा और राष्ट्रगान जारी करते हुए सरकार बना लेने का दावा भी किया है। बलूच लिबरेशन आर्मी (बीएलए) के लड़ाकों ने 27 पुलिसकर्मियों का आपहरण कर हत्या कर दी है। इससे बलूच आंदोलन उत्साहित हुआ है और वे जल्द कानूनी रूप में आजादी मिल जाने की उम्मीद करने लगे हैं।

रिपब्लिक ऑफ बलूचिस्तान के नाम से सोशल मीडिया पर एक स्वघोषित बयान और पत्र वायरल हुए हैं, जिसमें बलूच नेता मीर यार बलूच और कुछ पाकिस्तान से आजादी की लड़ाई लड़ रहे संगठनों ने बलूचिस्तान को स्वतंत्र राष्ट्र घोषित कर दिया है। अपना नया झंडा और राष्ट्रगान जारी करते हुए सरकार बना लेने का दावा भी किया है। बलूच लिबरेशन आर्मी (बीएलए) के लड़ाकों ने 27 पुलिसकर्मियों का आपहरण कर हत्या कर दी है। इससे बलूच आंदोलन उत्साहित हुआ है और वे जल्द कानूनी रूप में आजादी मिल जाने की उम्मीद करने लगे हैं। हालांकि इस हत्याकांड के बाद पाक सेना ने बलूचिस्तान में फ्रंटियर कोर, पुलिस व आतंकवाद निरोधक बल के साथ ऑपरेशन शाबान शुरू कर दिया है। पाक के सामने अब बड़ी दिक्कत यह आ रही है कि बीएलए को इजरायली खुफिया एजेंसियों से धन, तकनीक और आधुनिक संचार उपकरण मिल रहे हैं। पाक सेना ने लड़कों के पास से स्टारलिंग उपकरण जब्त किए हैं। पाक सेना का यह भी आरोप है कि अफगानिस्तान बीएलए को विद्रोही बलूचों ने करीब 85 प्रतिशत बलूचिस्तान की भूमि पर काबिज होने का दावा किया है। बलूच कार्यकर्ताओं ने संयुक्त राष्ट्र और अंतरराष्ट्रीय समुदाय से स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में मान्यता देने की अपील भी कर दी है। यह पाकिस्तान का वह प्रमुख क्षेत्र है, जहां से

चीन-पाक आर्थिक गलियारा गुजर रहा है। इसकी सुरक्षा और भविष्य को लेकर भी चर्चाएं शुरू हो गई हैं। यही वह क्षेत्र है, जहां अत्यंत दुर्लभ खनिज एवं प्राकृतिक गैसें उपलब्ध हैं। यही पाकिस्तान की अर्थव्यस्था की रीढ़ हैं। बलूचिस्तान प्रांत में लंबे समय से स्वतंत्रता की जो लड़ाई चल रही है, वह अब सफलता के शिखर पर है। बलूचिस्तान को नए देश के रूप में मान्यता मिल जाती है तो 1971 के बाद पाकिस्तान की भूमि पर दूसरा बड़ा विभाजन दिखाई देगा। 1971 में भारतीय प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने बांग्लादेश की मुक्ति वाहिनी सेना को सैनिक मदद देकर पाक के दो टुकड़े कर घटना देखने को मिलेगी, जिसमें बलूचों द्वारा मनाए जाने वाले उत्सव में भारत भी भागीदार हो सकता है। बलूचों की स्वतंत्रता की संभावना का अहसास पाकिस्तान के पूर्व प्रधानमंत्री शाहिद खाकान अब्बासी ने भी जताया है। उनका कहना है कि बलूचिस्तान पर अब सेना और सरकार का नियंत्रण ढीला पड़ रहा है। यहां के हालात इतने खराब हैं कि सरकारी मंत्री तक बाहरी सुरक्षा के बिना बाहर नहीं निकल सकते हैं। सेना के जवान अपने ही देष में बंकरों में छिपे हैं।

बलूचिस्तान में विद्रोह की आग चरम पर हैं। बलूचिस्तान लिबरेशन आर्मी

दिए थे। अब बलूच प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी से हस्तक्षेप की मांग करते हुए दिल्ली में बलूचिस्तान का दूतावास खोलने की मांग कर रहे हैं।

प्रसिद्ध लेखक और सामाजिक कार्यकर्ता मीर यार बलूच को बलूच के लोगों के अधिकारों की वकालात के लिए जाने जाते हैं। बलूचों ने संयुक्त राष्ट्र से बलूचिस्तान में शांति रक्षक बल भेजने और पाक सेना को बलूच सीमा क्षेत्र से बाहर कर देने का आग्रह भी किया है। यदि बलूच स्वतंत्र देश बन जाता है तो भारत-पाक युद्ध के बीच 1971 की तरह एक युगांतरकारी

आजादी की मांग करने वाला सबसे पुराना सशस्त्र अलगाववादी संगठन है। यह संगठन पहली बार 1970 में अस्तित्व में आया था। इसने जुल्फिकार अली भुट्टो के कार्यकाल में बलूचिस्तान प्रांत में सशस्त्र विद्रोह का शंखनाद कर किया था। कालांतर में सैनिक तानाशाह जिया उल हक द्वारा सत्ता हथियाने के बाद बलूच नेताओं के साथ बातचीत हुई, जिसके परिणामस्वरूप संघर्ष विराम की स्थिति बन गई थी। नतीजतन बलूचिस्तान में सशस्त्र विद्रोह खत्म हो गया था और बीएलए का भी कोई वजूद नहीं रह गया था। किंतु कारगिल युद्ध के बाद सैन्य तानाशाह जनरल परवेज मुशर्रफ ने नवाज शरीफ का तख्तापलट कर सत्ता हथिया ली। इसके बाद मुशर्रफ के संकेत पर साल 2000 में बलूचिस्तान उच्च न्यायालय के न्यायाधीश नवाबमिरी की हत्या कर दी गई और मुशर्रफ ने कुटिल चतुराई बरतते हुए पाक सेना से इस मामले में आरोपी के रूप में बलूच नेता खेरबक्ष मिरी को गिरफ्तार करा दिया। इसके बाद फिनिक्स पक्षी की तरह बीएलए फिर उठ खड़ा हुआ। जगह-जगह हमले शुरू हो गए। साल 2020 में एकाएक बीएलए की ताकत बढ़ गई और बलूचिस्तान के सरकारी प्रतिष्ठानों तथा सुरक्षाबलों पर हमलों की संख्या बढ़ती चली गई।

बीएलए बलूचिस्तान में चीन के प्रभाव को किसी भी हाल में स्वीकार नहीं करता है। उसका मानना है कि चीन बलूचिस्तान की प्राकृतिक संपदा को हड़पने का काम कर रहा है। इसी नजरिए से ग्वादर बंदरगाह को विकसित करने के साथ एक बड़ा चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारा भी बना रहा है। दरअसल भारत-पाकिस्तान के बंटवारें के समय बलूचिस्तान को बलूचों की इच्छा के बिना बंदूक की जोर पर पाकिस्तान ने कब्जा कर लिया था। जबकि वे स्वयं को एक स्वतंत्र देश के रूप में देखना चाहते थे। अतएव पाक की स्वतंत्रता के समय से ही बलूचों का संघर्ष पाक सरकार और सेना से निरंतर बना हुआ है। बीएलए जब साल 2000 में वजूद में आया था तब इसके लड़ाकों की संख्या 6000 से भी ज्यादा थी। जिसमें करीब 150 आत्मघाती दस्ते शामिल थे। सरदार अकबर खान बुगती एक समय बलूचिस्तान के सर्वमान्य नेता रहे हैं। इसीलिए वे बलूचिस्तान के मुख्यमंत्री भी रहे थे। 26 अगस्त 2006 को पाकिस्तानी सुरक्षाबलों ने उनकी हत्या कर दी थी। तभी से यह संगठन पाक सेना से लोहा ले रहा है। वर्तमान में बलूच अलगाववादी और तालिबान के बीच

निरंतर निकटता बढ़ रही है। वैसे भी अफगानिस्तान में तालिबानी शासन के काबिज होने के बाद से पाकिस्तान में आतंकी घटनाएं बढ़ गई हैं। पाक सरकार ने भी स्वीकार किया है कि तहरीक-ए-तालिबान पाकिस्तान (टीटीपी) ही बलूच लड़ाकों को प्रशिक्षित कर रहा है। बलूचिस्तान प्रांत में अब महिलाओं ने भी बीएलए के साथ कंधे से कंधा मिलाकर बलूच नागरिकों के दमन चक्र के विरूद्ध मोर्चा खोल लिया है। इस सच्चाई को पाकिस्तान के रक्षा मंत्री ख्वाजा आसिफ ने भी स्वीकारा है।

पाक की आजादी के साथ बलूचिस्तान का मुद्दा जुड़ा है। पाक की कुल भूमि का 43.6 फीसदी हिस्सा केवल बलूचिस्तान का है। लेकिन इसका विकास नहीं हुआ है। करीब 01 करोड़ 30 लाख की आबादी वाले इस हिस्से में सर्वाधिक बलूच हैं, पाक की कुल आबादी में इनकी छह प्रतिशत की भागीदारी है। इसका कुल क्षेत्रफल 3,47,190 वर्ग किमी है। यहां हिंदु, सिख और ईसाई भी रहते हैं। इनमें आपस में खूब भाईचारा है। भगवान शिव की पत्नी सती का हिंगलाज मंदिर इसी बलूच क्षेत्र में आता है। अनेक मुसलमान भी देवी सती की पूजा-अर्चना करते हैं। क्योंकि ये धर्मांतरित हैं। यहां से कभी सांप्रदायिक दंगों की खबरें नहीं आती हैं। 1999 में परवेज मुशर्रफ सत्ता में आए तो उन्होंने बलूच भूमि पर सैनिक अड्डे खोल दिए। इसे बलूचों ने अपने क्षेत्र पर कब्जे की कोशिश माना और फिर से संघर्ष तेज हो गया। इसके बाद यहां कई अलगाववादी आंदोलन वजूद में आ गए। इनमें सबसे प्रमुख बलूचिस्तान लिबरेशन आर्मी है। पीओके और बलूचिस्तान पाक के लिए बहिष्कृत क्षेत्र हैं। पीओके की जमीन का इस्तेमाल वह, जहां भारत के खिलाफ शिविर लगाकर गरीब व लाचार मुस्लिम किशोरों को आतंकवादी बनाने का प्रशिक्षण देता रहा है, वहीं बलूचिस्तान की भूमि से खनिज व तेल का दोहन कर अपनी आर्थिक स्थिति बहाल किए हुए है। यहां सोना, तांबा, कोयला और प्राकृतिक गैसों के बड़े भंडार है, लेकिन इनसे कमाई का बड़ा हिस्सा पाक सरकार, सेना और चीनी कंपनियां हथिया लेती हैं। इस कारण लोगों का गुस्सा उबाल पर है।

बलूचिस्तान की कलात रियासत ने 15 अगस्त 1947 को स्वतंत्रता की घोषणा करने के बाद 27 मार्च 1948 को पाकिस्तान में शामिल हो गया था। लेकिन बलूचिस्तान ने पाक में विलय को कभी स्वीकार नहीं किया। लिहाजा यहां अलगाव की आग निरंतर बनी रही है। नतीजतन 2001 में यहां 50 हजार लोगों की हत्या पाक सेना ने कर दी थी। इसके बाद 2006 में अत्याचार के विरूद्ध आवाज बुलंद करने वाले 20 हजार सामाजिक कार्यकर्ताओं को अगवा कर लिया गया था, जिनका आज तक पता नहीं है। 2015 में 157 लोगों के अंग-भंग किए गए थे। फिलहाल पुलिस ने जाने-माने एक्टिविस्ट बाबा जान को भी हिरासत में लिया हुआ है। पिछले 20 साल से जारी दमन की इस सूची का खुलासा एक अमेरिकी संस्था ने किया है। वाशिंगटन में कार्यरत संस्था गिलगित-बलूचिस्तान नेशनल कांग्रेस के सेंग सिरिंग ने मोदी द्वारा उठाए, इस सवाल का समर्थन किया है कि पाकिस्तान के कब्जे वाले कश्मीर और बलूचिस्तान में लोगों पर होने वाले जुल्म एवं अत्याचार के बाबत पाक को दुनिया के समक्ष जवाब देना होगा? पाक तो जवाब देने वाला नहीं है, लेकिन भारत की यह जिम्मेदारी बनती है कि वह बलूचिस्तान की स्वतंत्रता में भागीदार बने?

खनन माफिया और सरकार

रघु ठाकुर

पिछले दिनों मुरैना में पत्थर खदानों से रेत खनन के समाचार प्रमुखता से समाचार पत्रों में आये। खनन माफिया का हौसला इतना बढ़ा है कि उन्होंने अनेक अधिकारियों के वाहन रोकने का प्रयास किया, उनके ऊपर ट्रेक्टर चढ़ाने का प्रयास किया। कई कर्मचारी वन और राजस्व विभाग के घायल हुए और कुछ तो शहीद हो गये। कई अखबारों ने खनन वालों के बयान छापे कि वे पुलिस थाने के सामने से निकलते हैं, परंतु उन्हें रोकने की हिम्मत पुलिस में नहीं है। क्योंकि खनन करने वाले बंदूक रखते हैं और कर्मचारी भी जानते हैं कि वह गोली भी मार सकते हैं। मुरैना के राज्य सरकार के एक मंत्री ने बयान दिया है कि खनन करने वाले नौजवानों की लाचारी है क्योंकि उनके पास रोजगार नहीं है। इस पक्ष से इंकार नहीं किया जा सकता कि बेरोजगारी भी एक कारण है परंतु यह भी तथ्य है कि अब बेरोजगार नौजवान तो खनन करने वाले हैं या ट्रेक्टर आदि चलाने वाले हैं, याने एक प्रकार के अल्प वेतन भोगी श्रमिक जैसे हैं। इनके मालिक बड़े माफिया हैं जो इन नौजवानों से यह कार्य कराते और वे बेरोजगार नहीं हैं। बल्कि वह करोड़पति हैं जिनके पास बड़े-बड़े मकान हैं, गाड़ियां हैं और अपराध करने वाले उनके कर्मचारी हैं। वैसे तो यह खनन का सिलसिला कोई आज का नहीं है बल्कि इसकी शुरूआत तो 1971 के बाद जब श्रीमती इंदिरा गांधी प्रधानमंत्री थी और उनके बेटे स्वरू संजय गांधी सत्ता के अघोषित नियंत्रक थे, तभी हो चुकी थी। दिल्ली के आसपास के 30-40 किमी के दायरे के पहाड़ों को खोदने वाले उस समय

> खनन माफिया का हौसला इतना बढ़ा है कि उन्होंने अनेक अधिकारियों के वाहन रोकने का प्रयास किया, उनके ऊपर ट्रेक्टर चढ़ाने का प्रयास किया। कई कर्मचारी वन और राजस्व विभाग के घायल हुए और कुछ तो शहीद हो गये। कई अखबारों ने खनन वालों के बयान छापे कि वे पुलिस थाने के सामने से निकलते हैं, परंतु उन्हें रोकने की हिम्मत पुलिस में नहीं है।

सत्ता के संरक्षण में वह छोटी हो या बड़ी हो खनन माफिया पनपते हैं। और इसी प्रकार रेत का खनन भी देश के अधिकांश इलाकों में बड़ी मझौली या छोटी नदियों के पास रेत का खनन कराने वाले रेत माफिया और आमतौर पर माफिया सरगना उस स्थानीय जाति, जिसकी संख्या व बाहुबल होता है, के होते हैं।

सभी कांग्रेस समर्थक थे और आज वे भी दिल्ली के पाश इलाकों में बड़े-बड़े मकान बनाकर रह रहे हैं और कारों में चल रहे हैं।

सत्ता के संरक्षण में वह छोटी हो या बड़ी हो खनन माफिया पनपते हैं। और इसी प्रकार रेत का खनन भी देश के अधिकांश इलाकों में बड़ी मझौली या छोटी नदियों के पास रेत का खनन कराने वाले रेत माफिया और आमतौर पर माफिया सरगना उस स्थानीय जाति, जिसकी संख्या व बाहुबल होता है, के होते हैं। खनन करने वाले उनके कर्मचारी होते हैं। खनन से देश के पर्यावरण पर जो असर पड़ा है इसका कोई विधिवत आंकलन अभी तक नहीं हुआ है। न सरकारों ने कराया है और न किसी अन्य प्रकृति के संरक्षकों ने कराया है। सरकारों से तो उम्मीद करना ही व्यर्थ है क्योंकि आमतौर पर यह सभी खनन माफिया सरकारों के संरक्षण में ही पलते हैं। सत्ता के मुखिया की जाति के नाम उनके ट्रेक्टरों और वाहनों पर लिखे रहते हैं, उनसे दुर्घटनायें होती हैं, निर्दोष लोग मरते हैं, परंतु सरकार के मुखिया के संरक्षण के चलते प्रशासन व पुलिस उन्हें रोकना, पकड़ना या अपराध दर्ज करना तो दूर उन्हें दूर से सलाम करते हैं। पत्थर और रेत के खनन से कितने ही इलाकों में खदानें बन गई हैं और इन खदानों में पानी भरने से अनजाने में लोग डूबकर मर जाते हैं क्योंकि उन्हें इनका कोई अनुमान नहीं होता। इन सामान्य व निर्दोष लोगों को सरकारें भी कोई मुआवजा नहीं देती क्योंकि वे दूरस्थ ग्रामीण अंचलों में रहने वाले होते हैं। लगातार नदियों से रेत निकालने से जो नदियों के जल का शुद्धिकरण होता था वह घट रहा है और नदियां मिटटी के दलदल में बदल रही हैं। पत्थरों को खोदने के लिये वनों को काटा जाता है और वनों की संख्या इस कारण से घट रही है परंतु आज तक देश के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने अपने मन की बात में पर्यावरण नष्ट करने वाले, प्रकृति को नष्ट करने वाले इन खनन माफियाओं के बारे में कोई चिंता व्यक्त नहीं की? हो सकता है कि उसका एक कारण यह भी हो कि इन दिनों देश के लगभग 22 राज्यों में भाजपा या एनडीए की सरकारें हैं जो उनकी अपनी है और अपनी सरकारों के अपराधों के बारे में बोलना उनकी संस्कृति नहीं है बल्कि अपनों के अपराध पर पर्दा डालना और दूसरों के अपराध को बढ़ा-चढ़ाकर बताना उनकी शैली है या राजनैतिक चतुराई है। अगर यह खनन नहीं रुका तो कुछ वर्षों के बाद देश की बड़ी व पवित्र मानी जाने वाली नदियां भी मिटटी के दलदल में बदल जायेगी, वही बड़े-बड़े पहाड़ भी पत्थरों के टीले बन जायेंगे। आज सरकार के वन मंत्री की छत्रछाया में भारत सरकार ने तो अरावली पर्वत में खनन की अनुमति को लेकर जो योजना प्रस्तुत की थी, उसमें तो यह कह दिया गया था कि अगर 200 मी. के ऊपर पहाड़ है, तो वही पहाड़ माना जायेगा तथा उसमें खनन की अनुमति

दी जा सकेगी। भारत सरकार के इस प्रस्ताव पर पहले तो सुप्रीम कोर्ट ने बगैर अध्ययन व विचार कर स्वीकृति की मुहर लगा दी, पर सारे राजस्थान व देश से जब अरावली बचाओ का अभियान शुरू हुआ तब सुप्रीम कोर्ट ने सरकार को दोषी बताते हुए अपना आदेश वापिस लिया। यह सर्वविदित है कि अरावली पर्वत में बड़ी संख्या में बड़ी पर्वत श्रृंखलायें हैं और यह सभी पर्वतों में होती है। अगर एक बार यह पर्वत श्रृंखलायें कटकर साफ हो जाती, चट्टान व पर्वतों को खोद दिया जाता तो राजस्थान का क्या होता? प्राण वायु कहां से मिलती? वर्षा के लिये बादल कहां से रुकते, कितना सूखा पड़ता इन सबके बारे में सरकारों को कोई चिंता नहीं। आज धारणा यह बन चुकी है कि सरकारों व प्रशासन तंत्र को केवल रिश्वत चिहये चाहे देश का कुछ भी हो। यह पर्वत श्रृंखला मात्र पर्यावरण की संरक्षक नहीं हैं बल्कि यह देश के गौरवशाली इतिहास की कहानियाँ भी हैं। हल्दी घाटी के युद्ध में देश के पुरखों ने शौर्य का प्रदर्शन किया था और देशभर में हजारों आंचलिक गौरव गाथायें हैं, जो इन पहाड़ों की श्रृंखलाओं में संरक्षित है। निसंदेह राजस्थान के लोगों ने अरावली बचाने की शुरुआत की वह देश के लिये प्रेरक संदेश है और शायद ऐसी जनमानस और आमजन की पहल अब देश के पर्यावरण वनों, नदियों, इतिहास और संस्कृति को बचा सकती है।

भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने बाद में अरावली पर्वत को लेकर कुछ सख्त रुख अपनाया है उसका मप्र के बाहर राजस्थान, उप्र, हरियाणा, बिहार आदि में क्या असर हुआ है, इसकी मुझे जानकारी नहीं है परंतु मप्र में प्रदेश के मुख्य सचिव ने अवश्य कुछ सख्त पहल की है तथा इन खनन क्षेत्रों व माफियाओं को रोकने के लिये विशेष पुलिस बल भेजे हैं तथा कहा कि खनन रुकना चाहिये, बजट का रोना न रोयें। इससे लगता है कि सरकार भले ही सुप्रीम कोर्ट के दबाव में और कुछ भाजपा के अंतर दलीय राजनैतिक सभी कारणों के कारण कुछ सक्रिय हुआ है। मैं उम्मीद करता हूँ कि इससे प्रदेश में विशेष तौर से मुरैना में तो खनन रुकेगा। हालांकि होना तो यह चाहिए कि जितने खनन माफिया प्रदेश में हैं उनकी संपत्ति की जांच होनी चाहिए और उनके पास अरबों की संपत्ति कहां से आई वह जप्त होनी चाहिये और उनके विरुद्ध आपराधिक कार्यवाही होनी चाहिए। हालांकि मुझे नहीं लगता कि सरकार ऐसा कदम उठायेगी। दूसरी तरफ मुझे यह भी आशंका है कि जो हजारों नौजवान और ग्रामीणजन इस खनन के अवैध धंधे में लगे थे, खोदने से लेकर लाने ले जाने तक उनके सुरक्षा पहरी बनकर आदि-आदि, वे सब अपना पेट भरने के लिये अपराध की ओर मुड़ सकते हैं। इसलिये सरकार को चाहिए कि इन अंचलों के नौजवानों के लिये रोजगार के लिये, साथ-साथ विशेष अभियान चलाये ताकि उन्हें वैकल्पिक रोजगार मिल सके और वे अपराध की दुनिया में प्रवेश न करें।

राजनीति से आगे: भारत की शिक्षा व्यवस्था का पुनर्निर्माण

डॉ. विजय गर्ग

भारत एक जीवंत लोकतंत्र है, जहाँ चुनाव, सरकारों का गठन, मंत्रिमंडल में फेरबदल और राजनीतिक बहसें अक्सर राष्ट्रीय चर्चा का केंद्र बनी रहती हैं। लोकतंत्र में इन घटनाओं का अपना महत्व है, लेकिन इन सबसे भी अधिक महत्वपूर्ण एक ऐसा विषय है जिस पर निरंतर और गंभीर ध्यान देने की आवश्यकता है- भारत की शिक्षा व्यवस्था का पुनर्निर्माण। किसी भी राष्ट्र का भविष्य केवल इस बात से तय नहीं होता कि उस पर कौन शासन करता है, बल्कि इस बात से तय होता है कि उसके बच्चों को कैसी शिक्षा मिलती है। शिक्षा किसी भी विकसित और समृद्ध राष्ट्र की आधारशिला होती है। यह केवल पढ़ना-लिखना नहीं सिखाती, बल्कि सोचने, समझने, निर्णय लेने, नवाचार करने और जिम्मेदार नागरिक बनने की क्षमता भी विकसित करती है। जिन देशों ने शिक्षा को अपनी सर्वोच्च प्राथमिकता बनाया, वे आज विज्ञान, प्रौद्योगिकी, अर्थव्यवस्था और सामाजिक विकास के क्षेत्र में विश्व का नेतृत्व कर रहे हैं। भारत के पास विश्व की सबसे बड़ी युवा आबादी है, इसलिए शिक्षा हमारे लिए केवल एक क्षेत्र नहीं, बल्कि राष्ट्र निर्माण का सबसे शक्तिशाली माध्यम है।

भारत के पास विश्व की सबसे बड़ी युवा आबादी है, इसलिए शिक्षा हमारे लिए केवल एक क्षेत्र नहीं, बल्कि राष्ट्र निर्माण का सबसे शक्तिशाली माध्यम है।

पिछले वर्षों में भारत ने शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है, लेकिन अनेक चुनौतियाँ आज भी मौजूद हैं। अनेक सरकारी विद्यालयों में आधारभूत सुविधाओं का अभाव, योग्य शिक्षकों की कमी, पुरानी शिक्षण पद्धतियाँ, ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच शैक्षिक असमानता तथा डिजिटल संसाधनों की कमी जैसी समस्याएँ अभी भी शिक्षा की गुणवत्ता को प्रभावित कर रही हैं।

कोविड-19 महामारी ने यह भी स्पष्ट कर दिया कि डिजिटल शिक्षा तक सभी की समान पहुँच नहीं है।

आज की शिक्षा व्यवस्था की सबसे बड़ी कमजोरी यह है कि उसका केंद्र सीखना नहीं, बल्कि परीक्षा और अंक बन गए हैं। विद्यार्थी ज्ञान अर्जित करने के बजाय अधिक अंक प्राप्त करने की दौड़ में शामिल हो गए हैं। रटकर पढ़ने की प्रवृत्ति ने जिज्ञासा, रचनात्मकता और आलोचनात्मक चिंतन जैसी क्षमताओं को पीछे छोड़ दिया है। जबकि कृत्रिम बुद्धिमत्ता, स्वचालन और नई तकनीकों के इस युग में सफलता उन्हीं को मिलेगी जो समस्याओं का समाधान खोज सकें, नए विचार प्रस्तुत कर सकें और बदलती परिस्थितियों के अनुसार स्वयं को ढाल सकें।

इसलिए शिक्षा सुधारों का उद्देश्य केवल पाठ्यक्रम बदलना नहीं, बल्कि सीखने की पूरी संस्कृति को बदलना होना चाहिए। विद्यालयों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण, तार्किक सोच, रचनात्मकता, संवाद कौशल, नेतृत्व क्षमता और जीवन कौशल को समान महत्व दिया जाना चाहिए। पुस्तकालय, प्रयोगशालाएँ, खेल, संगीत, कला, योग, पर्यावरण शिक्षा तथा व्यावसायिक शिक्षा को भी मुख्यधारा में लाना होगा। शिक्षक शिक्षा व्यवस्था की आत्मा होते हैं। यदि शिक्षक प्रेरित, प्रशिक्षित और सम्मानित होंगे, तभी शिक्षा में वास्तविक परिवर्तन संभव होगा। शिक्षकों को आधुनिक तकनीकों का प्रशिक्षण, निरंतर व्यावसायिक विकास के अवसर, बेहतर कार्य वातावरण तथा समाज में उचित सम्मान मिलना चाहिए। शिक्षा सुधार की कोई भी योजना शिक्षकों को केंद्र में रखे बिना सफल नहीं हो सकती।

उच्च शिक्षा को भी नई दिशा देने की आवश्यकता है। विश्वविद्यालयों को केवल डिग्री प्रदान करने वाले संस्थान नहीं, बल्कि अनुसंधान, नवाचार, स्टार्टअप, उद्यमिता और ज्ञान निर्माण के केंद्र बनना होगा। उद्योग और शैक्षणिक संस्थानों के बीच मजबूत सहयोग स्थापित किया जाना चाहिए

उच्च शिक्षा को भी नई दिशा देने की आवश्यकता है। विश्वविद्यालयों को केवल डिग्री प्रदान करने वाले संस्थान नहीं, बल्कि अनुसंधान, नवाचार, स्टार्टअप, उद्यमिता और ज्ञान निर्माण के केंद्र बनना होगा। उद्योग और शैक्षणिक संस्थानों के बीच मजबूत सहयोग स्थापित किया जाना चाहिए, ताकि विद्यार्थी केवल रोजगार खोजने वाले नहीं, बल्कि रोजगार सृजित करने वाले भी बन सकें। प्रौद्योगिकी शिक्षा

के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन ला सकती है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित शिक्षण, वर्चुअल प्रयोगशालाएँ, स्मार्ट कक्षाएँ, ऑनलाइन शिक्षा और व्यक्तिगत सीखने की प्रणालियाँ शिक्षा को अधिक प्रभावी और सुलभ बना सकती हैं। लेकिन तकनीक का उद्देश्य शिक्षक का स्थान लेना नहीं, बल्कि उनके कार्य को अधिक प्रभावशाली बनाना होना चाहिए। साथ ही, प्रत्येक छात्र तक डिजिटल संसाधनों की समान पहुँच सुनिश्चित करना भी आवश्यक है।

शिक्षा में समान अवसर सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांत होना चाहिए। चाहे विद्यार्थी किसी भी जाति, वर्ग, लिंग, आर्थिक स्थिति या भौगोलिक क्षेत्र से आता हो, उसे गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त करने का समान अधिकार मिलना चाहिए। छात्रवृत्तियाँ, समावेशी शिक्षा, दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए सुविधाएँ तथा ग्रामीण क्षेत्रों में बेहतर विद्यालय इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम हो सकते हैं। शिक्षा का उद्देश्य केवल कुशल पेशेवर तैयार करना नहीं, बल्कि अच्छे नागरिक बनाना भी है। विद्यार्थियों में ईमानदारी, संवेदनशीलता, पर्यावरण संरक्षण, संविधान के प्रति सम्मान, सामाजिक उत्तरदायित्व और मानवीय मूल्यों का विकास उतना ही आवश्यक है जितना गणित, विज्ञान या तकनीक का ज्ञान।

सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि शिक्षा को राजनीतिक बदलावों से ऊपर रखा जाए। सरकारें बदलती रहेंगी, लेकिन शिक्षा की दीर्घकालिक नीतियों में निरंतरता बनी रहनी चाहिए। शिक्षा सुधार किसी एक राजनीतिक दल का कार्यक्रम नहीं, बल्कि पूरे राष्ट्र का साझा संकल्प होना चाहिए। नीति निर्माण में शिक्षकों, अभिभावकों, विद्यार्थियों, उद्योग जगत, वैज्ञानिकों और समाज के सभी वर्गों की भागीदारी सुनिश्चित की जानी चाहिए। भारत आज जनसांख्यिकीय लाभ के ऐसे दौर में है, जहाँ करोड़ों युवा देश की सबसे बड़ी शक्ति हैं। यदि उन्हें गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, आधुनिक कौशल और सही अवसर मिले, तो भारत विज्ञान, चिकित्सा, प्रौद्योगिकी, अनुसंधान, उद्यमिता और वैश्विक नवाचार का अग्रणी राष्ट्र बन सकता है। लेकिन यदि शिक्षा सुधारों की उपेक्षा की गई, तो यह अवसर चुनौती में बदल सकता है। आज आवश्यकता केवल राजनीतिक परिवर्तन की नहीं, बल्कि शैक्षिक परिवर्तन की है। संसदें कानून बना सकती हैं, सरकारें योजनाएँ शुरू कर सकती हैं, लेकिन राष्ट्र का वास्तविक निर्माण कक्षाओं में होता है। एक मजबूत भारत का सपना तभी साकार होगा जब हर बच्चे को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, हर शिक्षक को सम्मान और हर विद्यालय को आवश्यक संसाधन उपलब्ध होंगे। समय आ गया है कि हम राजनीति से आगे बढ़कर शिक्षा को राष्ट्रीय प्राथमिकता बनाएँ। क्योंकि किसी भी देश का भविष्य चुनावी नारों से नहीं, बल्कि उसके विद्यालयों, शिक्षकों और विद्यार्थियों से तय होता है। भारत का पुनर्निर्माण शिक्षा के पुनर्निर्माण से ही संभव है।

नशे के विरुद्ध निर्णायक युद्ध : ड्रग्स माफियाओं पर बढ़ा प्रहार

किशन भावनानी

वैश्विक स्तर पर जिस प्रकार भारत ने वामपंथी उग्रवाद के विरुद्ध समयबद्ध रणनीति अपनाकर विजन 2026 के माध्यम से नक्सलवाद को निर्णायक रूप से समाप्त करने का लक्ष्य निर्धारित किया, उसी प्रकार अब केंद्र सरकार ने मादक पदार्थों की तस्करी और नशे के अवैध कारोबार के विरुद्ध भी एक स्पष्ट, बहुस्तरीय और समयबद्ध अभियान प्रारंभ किया है। केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह द्वारा 26 जून 2026 को नार्को- कोऑर्डिनेशन सेंटर (नाकॉर्ड) की 10वीं शीर्ष स्तरीय बैठक में जारी नारकोटिक्स कंट्रोल विजन डॉक्यूमेंट 2026-2029 केवल एक प्रशासनिक दस्तावेज नहीं, बल्कि भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा, युवाओं के भविष्य और संगठित अंतरराष्ट्रीय अपराध के विरुद्ध घोषितरणनीतिक युद्ध का रोडमैप है। गृहमंत्री द्वारा प्रस्तुत 3डी रणनीति-डिटेक्ट, डिसट्रप्ट और डिस्ट्रॉय, इस नई नीति का संचालन सिद्धांत है। डिटेक्ट का अर्थ है अत्याधुनिक तकनीक, खुफिया सूचनाओं और डेटा विश्लेषण के माध्यम से नेटवर्क की प्रारंभिक पहचान करना। डिसट्रप्ट का उद्देश्य अपराधी नेटवर्क की गतिविधियों को बीच में ही रोक देना है ताकि वे अपनी आपूर्ति श्रृंखला संचालित न कर सकें। डिस्ट्रॉय का आशय है अपराधियों के आर्थिक स्रोत, अवैध संपत्तियों, उत्पादन केंद्रों और पूरे नेटवर्क को स्थायी रूप से समाप्त करना। यह रणनीति केवल गिरफ्तारी तक सीमित नहीं बल्कि अपराध की संरचना को ध्वस्त करने पर आधारित है। सरकार ने स्पष्ट संकेत दिया है कि आने वाले तीन वर्ष यह तय करेंगे कि भारत नशे के वैश्विक नेटवर्क के सामने झुकेगा या उसे निर्णायक रूप से परास्त करेगा। आज मादक पदार्थों की तस्करी पारंपरिक अपराध की सीमा से बहुत आगे निकल चुकी है। यह आतंकवाद, हथियारों की तस्करी, हवाला, मनी लॉन्ड्रिंग, साइबर अपराध और अंतरराष्ट्रीय संगठित अपराध से गहराई से जुड़ चुकी है। दुनियाँ के अनेक सुरक्षा विशेषज्ञ यह मानते हैं कि ड्रग्स का पैसा अक्सर आतंकवादी संगठनों, उग्रवादी नेटवर्क और अंतरराष्ट्रीय अपराध सिंडिकेट की वित्तीय जीवनरेखा बनता है। इसी कारण

भारत सरकार ने पहली बार स्पष्ट रूप से यह संदेश दिया है कि ड्रग्स केवल कानून-व्यवस्था का विषय नहीं बल्कि राष्ट्रीय सुरक्षा का गंभीर प्रश्न है। यह दृष्टिकोण भारत की एंटी नारकोटिक्स नीति में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन का संकेत देता है।

नार्कोर्ड की 10वीं बैठक में गृहमंत्री ने कहा कि आने वाले तीन वर्ष यह निर्धारित करेंगे कि नशा भारत पर हावी होगा या भारत नशे पर विजय प्राप्त करेगा। यह केवल राजनीतिक वक्तव्य नहीं बल्कि प्रशासनिक जवाबदेही का सार्वजनिक संकल्प है। इस बैठक में केंद्र सरकार, राज्यों, केंद्रीय जांच एर्जेसियों, सुरक्षा बलों और विभिन्न मंत्रालयों के वरिष्ठ अधिकारियों की भागीदारी इस बात का प्रमाण है कि सरकार इस चुनौती को पूरे शासन तंत्र की सामूहिक जिम्मेदारी मान रही है।

नारकोटिक्स कंट्रोल विजन डॉक्यूमेंट 2026-2029 की सबसे बड़ी विशेषता इसका त्रिस्तरीय दृष्टिकोण है। पहला लक्ष्य है डिमांड रिडक्शन अर्थात समाज विशेषकर युवाओं में नशीले पदार्थों की मांग को कम करना। दूसरा लक्ष्य है सप्लाई रिडक्शन अर्थात तस्करी की पूरी आपूर्ति श्रृंखला को ध्वस्त करना। तीसरा लक्ष्य है हार्म रिडक्शन एवं पुनर्वास,अर्थात नशे के शिकार व्यक्तियों को अपराधी नहीं बल्कि उपचार और पुनर्वास के पात्र नागरिक मानते हुए उन्हें समाज की मुख्यधारा में वापस लाना। यही संतुलित दृष्टिकोण आधुनिक वैश्विक ड्रग नीति का भी आधार माना जाता है।

इस विजन डॉक्यूमेंट की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यह केवल ड्रग्स पकड़ने की नीति नहीं है बल्कि पूरे अपराधी नेटवर्क को नष्ट करने की रणनीति प्रस्तुत करता है। पहले जहां कार्रवाई का मुख्य केंद्र ड्रग्स की बरामदगी और छोटे तस्करों की गिरफ्तारी तक सीमित रहता था, वहीं अब लक्ष्य पूरे अंतरराष्ट्रीय कार्टेल, उनके वित्तीय स्त्रोत, हवाला नेटवर्क, मनी लॉन्ड्रिंग चैनल, डार्कनेट प्लेटफॉर्म और विदेशी संचालकों तक पहुंचना है। यह नेटवर्क आधारित प्रवर्तन भारत की जांच प्रणाली को अधिक प्रभावी बना सकता है। बीते कुछ वर्षों में ड्रग्स तस्करी का स्वरूप तेजी से बदला है। अफीम, चरस और गांजा जैसे पारंपरिक मादक पदार्थों के साथ-साथ अब सिंथेटिक ड्रग्स जैसे मेथमफेटामाइन, एमडीएमए और अन्य रासायनिक नशीले पदार्थ,तेजी से फैल रहे हैं। इनकी सबसे बड़ी चुनौती यह है कि इन्हें छोटे-छोटे गुप्त प्रयोगशालाओं में तैयार किया जा सकता है, इन्हें छिपाना अपेक्षाकृत आसान होता है और इनका अंतरराष्ट्रीय व्यापार डिजिटल माध्यमों से संचालित होता है। यही कारण है कि विजन डॉक्यूमेंट में सिंथेटिक ड्रग्स को विशेष खतरे के रूप में चिन्हित किया गया है।

डिजिटल युग ने ड्रग तस्करी को नई दिशा दी है। डार्कनेट, एन्क्रिप्टेड मैसेजिंग प्लेटफॉर्म और क्रिप्टोकरेंसी ने अपराधियों को ऐसी गुमनामी प्रदान की है जिससे पारंपरिक पुलिस व्यवस्था के लिए उन्हें पकड़ना कठिन हो गया है। आज कई अंतरराष्ट्रीय ड्रग सौदे बिना किसी प्रत्यक्ष संपर्क के ऑनलाइन तय होते हैं और भुगतान डिजिटल माध्यमों से होता है। भारत की नई नीति इसी चुनौती को ध्यान में रखते हुए साइबर फॉरेंसिक, डिजिटल निगरानी, डेटा इंटेलिजेंस और अंतरराष्ट्रीय सहयोग पर

विशेष बल देती है।

भारत सरकार ने इस अभियान में वित्तीय कार्रवाई को भी अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान दिया है। आधुनिक संगठित अपराध का सबसे बड़ा आधार उसका आर्थिक संसाधन होता है। यदि तस्करों की संपत्ति, बैंक खाते, हवाला नेटवर्क और निवेश जब्त कर दिए जाएं तो उनका अपराध लंबे समय तक टिक नहीं सकता। इसी सोच के तहत संबंधित कानूनों के माध्यम से अवैध संपत्तियों की कुर्की, मनी लॉन्ड्रिंग की जांच तथा आर्थिक नेटवर्क को ध्वस्त करने की रणनीति को मजबूत किया जा रहा है। राज्यों में गठित एंटी-नारकोटिक्स टास्क फोर्स इस अभियान की जमीनी शक्ति होगी। प्रत्येक राज्य और केंद्र शासित प्रदेश में यह टास्क फोर्स नोडल एजेंसी के रूप में कार्य करेगी। इसका उद्देश्य केवल पुलिस कार्रवाई करना नहीं बल्कि विभिन्न विभागों, खुफिया एजेंसियों, सीमा सुरक्षा बलों, राजस्व विभाग और अन्य संस्थाओं के बीच समन्वय स्थापित करना है। इससे सूचना साझा करने और संयुक्त कार्रवाई की क्षमता बढ़ने की संभावना है।

नार्कोर्ड की चार स्तरीय संरचना, राष्ट्रीय, राज्य, जिला और उप-जिला स्तर, भारत जैसे विशाल और संघीय देश के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। ड्रग्स नेटवर्क स्थानीय स्तर पर सक्रिय होते हैं लेकिन उनके तार अंतरराष्ट्रीय संगठनों से जुड़े हो सकते हैं। इसलिए स्थानीय पुलिस से लेकर केंद्रीय एजेंसियों तक एकीकृत समन्वय ही इस चुनौती का प्रभावी समाधान प्रदान कर सकता है। बैठक के दौरान देशभर में लगभग 2,09,500 किलोग्राम अवैध नशीले पदार्थों का विनाश किया गया जिसकी अनुमानित कीमत लगभग 6,000 करोड़ रूपए बताई गई। यह केवल प्रतीकात्मक कार्रवाई नहीं बल्कि यह संदेश है कि जब्त किए गए मादक पदार्थ पुनः अवैध बाजार में नहीं लौटेंगे। इसके साथ ही यह भी स्पष्ट हुआ कि विभिन्न एजेंसियों के बीच समन्वित कार्रवाई के परिणाम अब अधिक व्यापक रूप में सामने आ रहे हैं। भारत सरकार ने जम्मू और गुवाहाटी में नारकोटिक्स कंट्रोल ब्यूरो के नए क्षेत्रीय कार्यालय प्रारंभ कर सीमावर्ती क्षेत्रों में अपनी संस्थागत क्षमता भी मजबूत की है। भारत की पश्चिमी और पूर्वोत्तर सीमाएं लंबे समय से अंतरराष्ट्रीय ड्रग्स मार्गों से प्रभावित रही हैं। ऐसे में इन क्षेत्रों में संस्थागत उपस्थिति बढ़ाना रणनीतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण कदम माना जा सकता है।

ड्रग्स के विरूद्ध संघर्ष केवल गृह मंत्रालय या पुलिस की जिम्मेदारी नहीं रहेगा बल्कि शिक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक न्याय, वित्त, सीमा प्रबंधन, विदेश नीति, सूचना प्रौद्योगिकी तथा अन्य मंत्रालयों सहित पूरे शासन तंत्र की साझा जिम्मेदारी होगी। जब 44 केंद्रीय मंत्रालय, राज्य सरकारें और विभिन्न एजेंसियां एक साझा लक्ष्य के साथ कार्य करेंगी, तभी व्यापक परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। नशे के विरूद्ध लड़ाई केवल दमनात्मक कार्रवाई से नहीं जीती जा सकती। यदि समाज में जागरूकता, विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में नशा विरोधी अभियान, परिवारों की सहभागिता मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता और पुनर्वास केंद्रों की प्रभावशीलता नहीं बढ़ेगी तो केवल गिरफ्तारी से समस्या का स्थायी समाधान संभव नहीं होगा। इसलिए विजन डॉक्यूमेंट में मांग कम करने और पुनर्वास को समान महत्व दिया गया है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी ड्रग्स के विरूद्ध संघर्ष में सहयोग अत्यंत आवश्यक है। क्योंकि ड्रग्स उत्पादन, तस्करी, वित्तपोषण और वितरण अक्सर कई देशों में फैला होता है। इसलिए प्रत्यर्पण, साझा खुफिया जानकारी, सीमापार जांच और अंतरराष्ट्रीय कानून प्रवर्तन एजेंसियों के साथ सहयोग भारत की रणनीति का महत्वपूर्ण हिस्सा बनता जा रहा है। हालांकि किसी भी विजन डॉक्यूमेंट की सफलता उसके क्रियान्वयन पर निर्भर करती है। यदि राज्यों के बीच समन्वय मजबूत नहीं होगा, जांच समयबद्ध नहीं होगी, न्यायालयों में मामलों का शीघ्र निपटारा नहीं होगा और पुनर्वास व्यवस्था पर्याप्त नहीं होगी, तो लक्ष्य प्राप्त करना कठिन हो सकता है। इसलिए आने वाले तीन वर्षों में वास्तविक परीक्षा केवल नीति की नहीं बल्कि उसके प्रभावी कार्यान्वयन की होगी।

मुख्यमंत्री साय के प्रयासों से गरीब परिवारों के चेहरे पर आई मुस्कान

विजया पाठक

मुख्यमंत्री विष्णुदेव साय के नेतृत्व में छत्तीसगढ़ सरकार ग्रामीण और श्रमिक वर्ग के सामाजिक-आर्थिक सशक्तीकरण को सर्वोच्च प्राथमिकता देते हुए अनेक जनकल्याणकारी योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन कर रही है। इन्हीं प्रयासों के केंद्र में दीनदयाल उपाध्याय भूमिहीन कृषि मजदूर कल्याण योजना एक ऐसी महत्वपूर्ण पहल बनकर उभरी है, जिसने प्रदेश के लाखों भूमिहीन परिवारों को आर्थिक सुरक्षा प्रदान करने के साथ-साथ उनके जीवन में आत्मविश्वास और आत्मनिर्भरता का नया विश्वास भी जगाया है। योजना का उद्देश्य केवल आर्थिक सहायता उपलब्ध कराना नहीं, बल्कि उन परिवारों को सम्मानजनक जीवन जीने का अवसर देना है, जिनकी आजीविका लंबे समय से अस्थायी रोजगार और सीमित आय पर निर्भर रही है। राज्य सरकार का मानना है कि विकास का वास्तविक लाभ तभी सार्थक है, जब समाज के अंतिम पायदान पर खड़े व्यक्ति तक उसका प्रभाव पहुंचे। इसी सोच के अनुरूप संचालित इस योजना के अंतर्गत पात्र भूमिहीन कृषि मजदूर परिवारों को प्रतिवर्ष 10 हजार रुपये की आर्थिक सहायता सीधे उनके बैंक खातों में अंतरित की जाती है। प्रत्यक्ष लाभ अंतरण (डीबीटी) व्यवस्था के माध्यम से राशि बिना किसी बिचौलिये के हितग्राहियों तक पहुंच रही है, जिससे योजना की पारदर्शिता और प्रभावशीलता दोनों सुनिश्चित हो रही हैं।

नियमित आर्थिक सहायता उपलब्ध कराना है उद्देश्य

मुख्यमंत्री विष्णुदेव साय ने विभिन्न अवसरों पर कहा है कि राज्य सरकार का उद्देश्य केवल योजनाएं बनाना नहीं, बल्कि जरूरतमंद लोगों के जीवन में वास्तविक परिवर्तन लाना है। भूमिहीन कृषि मजदूर समाज का वह वर्ग है, जो खेती-किसानी और ग्रामीण अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देता है, लेकिन स्वयं कृषि भूमि के अभाव में आर्थिक असुरक्षा का सामना करता है। ऐसे परिवारों को नियमित आर्थिक सहायता उपलब्ध कराकर सरकार उनके

जीवन को अधिक सुरक्षित और स्थिर बनाने की दिशा में कार्य कर रही है। प्रदेश में वर्तमान समय में इस योजना के अंतर्गत लगभग 06 लाख हितग्राही परिवार लाभान्वित हो रहे हैं। इनमें ग्रामीण क्षेत्रों के साथ-साथ नगर पंचायत क्षेत्रों में निवास करने वाले पात्र परिवार भी शामिल हैं। विशेष रूप से बैगा-गुनिया समुदाय सहित सामाजिक रूप से वंचित वर्गों को भी योजना का लाभ मिल रहा है। इससे स्पष्ट होता है कि राज्य सरकार योजनाओं का लाभ समाज के हर पात्र वर्ग तक पहुंचाने के लिए प्रतिबद्ध है।

10 हजार रूपये की वार्षिक सहायता

योजना के तहत मिलने वाली 10 हजार रूपये की वार्षिक सहायता अनेक परिवारों के लिए जीवन बदलने वाली साबित हो रही है। दैनिक मजदूरी पर निर्भर परिवार इस राशि का उपयोग बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं, घरेलू आवश्यकताओं और अन्य जरूरी खर्चों में कर रहे हैं। जिन परिवारों के लिए पहले नियमित आय के अभाव में भविष्य की योजना बनाना कठिन था, वे अब इस सहायता के माध्यम से अपने जीवन को बेहतर बनाने की दिशा में कदम बढ़ा रहे हैं। कई हितग्राही इस आर्थिक सहायता का एक हिस्सा बचाकर स्वरोजगार की दिशा में भी प्रयास कर रहे हैं। कुछ परिवार पशुपालन, छोटी दुकानों, घरेलू व्यवसाय अथवा अन्य आयवर्धक गतिविधियों की शुरूआत की योजना बना रहे हैं। इससे यह योजना केवल सहायता तक सीमित नहीं रह गई है, बल्कि आत्मनिर्भरता की दिशा में प्रेरणा देने वाला माध्यम भी बन रही है।

बच्चों की पढ़ाई से स्वास्थ्य तक की सुरक्षा

सरकार के अनुसार योजना का सबसे बड़ा प्रभाव हितग्राहियों के मनोबल पर दिखाई दे रहा है। आर्थिक सहयोग मिलने से परिवारों में भविष्य को लेकर विश्वास बढ़ा है। बच्चों की पढ़ाई बाधित न हो, स्वास्थ्य संबंधी जरूरतें समय पर पूरी हों और घरेलू खर्चों के लिए कर्ज का सहारा कम लेना पड़े इन सभी क्षेत्रों में योजना सकारात्मक बदलाव ला रही है। योजना का लाभ लेने के लिए पात्रता भी स्पष्ट रूप से निर्धारित की गई है। आवेदक का छत्तीसगढ़ का मूल निवासी होना आवश्यक है तथा परिवार के किसी भी सदस्य के नाम पर कृषि योग्य भूमि नहीं होनी चाहिए। इसके अलावा भूमिहीन कृषि मजदूर, चरवाहा, नाई, धोबी, मोची, वनोपज संग्राहक सहित अन्य निर्धारित श्रेणियों के पात्र परिवार इस योजना का लाभ प्राप्त कर सकते हैं। इस व्यापक दायरे के कारण समाज के विभिन्न श्रमिक वर्गों को आर्थिक सुरक्षा का लाभ मिल रहा है।

प्रमुख जनकल्याणकारी योजनाओं में शामिल

राज्य सरकार का कहना है कि योजनाओं का उद्देश्य केवल आर्थिक सहायता देना नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय और समावेशी विकास को बढ़ावा देना भी है। मुख्यमंत्री विष्णुदेव साय के नेतृत्व में सरकार ऐसी योजनाओं पर विशेष ध्यान दे रही है, जिनसे गरीब, श्रमिक और वंचित वर्गों को प्रत्यक्ष लाभ मिल सके। इसी कारण दीनदयाल उपाध्याय भूमिहीन कृषि मजदूर कल्याण योजना को प्रदेश की प्रमुख जनकल्याणकारी योजनाओं में शामिल

किया जा रहा है। हितग्राहियों की प्रतिक्रियाएं भी योजना की उपयोगिता को दर्शाती हैं। लाभार्थियों का कहना है कि पहले उन्हें इस प्रकार की प्रत्यक्ष आर्थिक सहायता मिलने की उम्मीद नहीं थी। योजना से प्राप्त राशि ने उनके परिवार की आर्थिक चिंताओं को काफी हद तक कम किया है। बच्चों की पढ़ाई, दवाइयों की व्यवस्था और घरेलू जरूरतों को पूरा करने में उन्हें बड़ी राहत मिली है। कई परिवारों ने इसे अपने जीवन में सकारात्मक बदलाव लाने वाली पहल

ग्रामीण क्षेत्र की क्रय शक्ति

विशेषज्ञों का भी मानना है कि प्रत्यक्ष लाभ अंतरण आधारित योजनाएं ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। जब आर्थिक सहायता सीधे लाभार्थियों तक पहुंचती है, तो उसका उपयोग परिवार अपनी वास्तविक जरूरतों के अनुसार कर पाते हैं। इससे स्थानीय बाजार में भी आर्थिक गतिविधियों को गति मिलती है और ग्रामीण क्षेत्र की क्रय शक्ति बढ़ती है। मुख्यमंत्री विष्णुदेव साय के नेतृत्व में छत्तीसगढ़ सरकार लगातार यह प्रयास कर

बल्कि भविष्य के लिए भी आत्मनिर्भर बन सकें।

सामाजिक न्याय तथा समावेशी विकास की दिशा

दीनदयाल उपाध्याय भूमिहीन कृषि मजदूर कल्याण योजना आज केवल एक सरकारी योजना नहीं, बल्कि लाखों भूमिहीन परिवारों के लिए आशा, सम्मान और आर्थिक सुरक्षा का प्रतीक बन चुकी है। मुख्यमंत्री विष्णुदेव साय के नेतृत्व में संचालित यह पहल राज्य सरकार की उस

बताया है। लाभार्थियों ने मुख्यमंत्री विष्णुदेव साय और राज्य सरकार के प्रति आभार व्यक्त करते हुए कहा कि सरकार ने भूमिहीन मजदूरों की समस्याओं को समझते हुए ऐसी योजना लागू की है, जिससे गरीब परिवारों को सम्मानपूर्वक जीवन जीने का अवसर मिल रहा है। उनका कहना है कि यह आर्थिक सहयोग केवल राशि नहीं, बल्कि भविष्य के प्रति विश्वास और आत्मसम्मान का आधार भी है।

रही है कि विकास का लाभ समाज के प्रत्येक वर्ग तक समान रूप से पहुंचे। किसानों, श्रमिकों, महिलाओं, युवाओं और आदिवासी समुदायों के लिए संचालित विभिन्न योजनाओं के साथ यह योजना भी सामाजिक सुरक्षा के दायरे को मजबूत करने का कार्य कर रही है। सरकार का लक्ष्य आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों को ऐसी सहायता उपलब्ध कराना है, जिससे वे केवल वर्तमान जरूरतों को पूरा न करें,

सोच को भी प्रतिबिंबित करती है, जिसमें विकास का केंद्र समाज का अंतिम व्यक्ति है। आर्थिक सहायता, पारदर्शी व्यवस्था, व्यापक पात्रता और प्रत्यक्ष लाभ अंतरण जैसी विशेषताओं के कारण यह योजना प्रदेश के लाखों परिवारों के जीवन में सकारात्मक परिवर्तन का माध्यम बन रही है और सामाजिक न्याय तथा समावेशी विकास की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम के रूप में अपनी पहचान स्थापित कर रही है।

बालक बलीराम आजाद ने हिला दिया था अंग्रेजी हुकूमत को

बालक बलीराम की शहादत स्वाधीनता संग्राम की उत्कृष्ट भावना का प्रतीक थी। ऐसी भावना जिसमें जूनून था, जज्बा था और मजबूती थी। ऐसे वीर बालक के बलिदान ने देश के नौजवानों में क्राँति की नई ऊर्जा, नये जोश का आगाज किया। 13 मार्च 1932 को वानर सेना के कप्तान बलीराम ने वानर सेना का एक बड़ा जुलूस निकाला। यह जुलूस गांधी चौक पहुंचा। जुलूस सभा में परिणीत हो गया। सूचना प्राप्त होते ही पुलिस का दल वहां पहुंचा और बेतों से पिटाई शुरू कर दी। पुलिस ने बलीराम से झंडा और पर्चे छीन लिए। अंततः यह सभा विसर्जित हो गयी।

जैसा कि बलीराम आजाद में आजाद जुड़ा था, वैसे ही देश की आजादी के लिए इस बालक सेनानी ने अपने साहस से अंग्रेजी हुकूमत को हिला दिया था। मात्र 14 वर्ष के इस बालक में राष्ट्र के प्रति जो ललक, जो प्रेम था, उसकी बानगी इसके आंदोलन में देखी जा सकती थी। स्वाधीनता के लिए आजाद ने जो संघर्ष छेड़ा और लोगों में देश प्रेम की प्रेरणा भरी, उसकी मिसाल सब मानने को मजबूर थे। कैसे एक छोटा सा बालक भी बड़ी ताकत से टकराने तक को हिचकिचाया नही।

बलीराम आजाद कोई नेता नहीं था। वह तो 14 वर्ष का एक बालक था, स्कूल में पढ़ने वाला। तब आजादी के आन्दोलन के संदर्भ में उसकी क्या प्रासंगिकता हो सकती है। एक छोटे से बालक ने आजादी की लड़ाई में कौनसी और कैसे भूमिका अदा की। यह एक प्रेरणा की बात हो सकती है। इसी दृष्टि से बलीराम आजाद के चरित्र का महत्व है।

26 जनवरी 1932 को गांधी चौक में भाषण देते हुए ठाकुर प्यारेलाल सिंह गिरफ्तारी के साथ ही रायपुर में सन् 1932 के सत्याग्रह आन्दोलन की विधिवत शुरूआत हो गयी। नगर में उत्तेजना का वातावरण निर्मित हो गया। ठाकुर साहब को 2 वर्ष का सश्रम कारावास तथा 150/- जुर्माने की सजा दी गयी। ठाकुर साहब की गिरफ्तारी के साथ ही नगर में वानर सेना का उदय हुआ। इस वानर सेना का नेतृत्व बलीराम आजाद कर रहा था। जनवरी 1932 से मई 1932 तक नगर में वानर सेना की धूम मची थी। बीस-बीस, पच्चीस-पच्चीस के जत्थों में 12 वर्ष से 16 वर्ष की आयु के बच्चे नित्य जुलूस निकालते, सभाएं लेते, नारे लगाते, बुलेटिन बांटते और राष्ट्रीय गीतों से वातावरण को गुंजा देते थे। वानर सेना के कार्यक्रम वयस्कों के लिये चुनौती और कायरों में देश के लिए बलिदान की प्रेरणा प्रदान करने वाले थे।

बलीराम आजाद का जन्म सन् 1918 में तारासिव नामक ग्राम में हुआ था। उसके पिता का नाम बन्धुराम दुबे था। ब्राम्हणपारा रायपुर में रहकर वह विद्याध्ययन कर रहा था। सन् 1932 के आंदोलन के समय उसकी आयु मात्र 14 वर्ष थी। मोहल्ले के 20-25 बालकों को लेकर वह नित्य जुलूस निकालता, नारे लगाता और अंग्रेजी साम्राज्य को ललकारता था। डोंडी पीठ कर सभी को सूचना देता। वह खुद ही सभा की अध्यक्षता करता था।

13 मार्च 1932 को वानर सेना के कप्तान बलीराम ने वानर सेना का एक बड़ा जुलूस निकाला। यह जुलूस गांधी चौक पहुंचा। जुलूस सभा में परिणीत हो गया। सूचना प्राप्त होते ही पुलिस का दल वहां पहुंचा और बेतों से पिटाई शुरू कर दी। पुलिस ने बलीराम से झंडा और पर्चे छीन लिए। अंततः यह सभा विसर्जित हो गयी।

अप्रैल माह भर बलीराम प्रति रविवार को वानर सेना का जुलूस निकालता और सभाएं लेता रहा। प्रत्येक जुलूस और सभा में पुलिस बेतों से पिटाई करती थी। इसी माह एक दिन बलीराम ने आनंद समाज पुस्तकालय में एक सभा की घोषणा की। निश्चित समय पर सभा आरंभ हुई और वह स्वयं सभापति के आसन पर विराजमान हुआ। अन्य वक्ताओं के पश्चात् जब सभापति बलिराम आजाद ने अपना भाषण आरंभ किया तो हेड कांस्टेबल हरनारायण बेंत लेकर उस पर टूट पड़ा। बलीराम ने लगभग 15 मिनट तक भाषण दिया और हेड कांस्टेबल उस पर 15 मिनट तक बेंत बरसाता रहा। 15 मिनट बाद उसने भाषण समाप्त किया और सभा विसर्जन की घोषणा की।

Bastar's aspirational Adivasi schoolchildren have few viable futures

Sahib Singh Tulsi

Under the banner of “Bastar 2.0”, recent media reports and policy narratives present the region as moving from conflict towards development. New roads, tourism projects, and investment plans are framed as signs of a region finally integrating into what policymakers often call the national mainstream. The decline of Maoist violence is increasingly narrated as evidence that Bastar is entering a new era.

This framing has become central to how development in Bastar is imagined today. Unlike many other regions, where development is discussed primarily in terms of economic growth or infrastructure expansion, contemporary discussions of Bastar are closely tied to questions of security, State presence, and the consolidation of peace after decades of conflict. These investments are presented not only as development initiatives but also as indicators of a region moving beyond violence.

The transformations underway are significant. Yet they also raise an important question:

what kinds of futures are being created for the young people moving through Bastar's expanding educational system?

The dominant narrative follows a familiar sequence: security, then development, then stability. On the ground, however, the experiences of many young people are more complicated. More students are entering towns. Classrooms are fuller, and attendance has improved. These are important gains. But for many Adivasi students, schooling is only the beginning of a far more complex journey.

Part of this situation reflects Bastar's particular social and geographical context. Many villages remain distant from urban centres, connected only recently experience with higher education, competitive examinations, or professional employment.

This matters because educational mobility depends on more than access to classrooms. It also depends on access to information, guidance, networks, and familiarity with institutions. Families with longer histories of schooling or urban employment

classrooms and remaining in school longer than previous generations. But the pathways connecting education to secure livelihoods remain fragile.

Schooling and uncertainty

Over the past decade, access to schooling in Bastar has expanded significantly. State-run hostels have brought students from remote villages into nearby through expanding road networks. Generations of conflict, uneven infrastructure, and limited institutional presence have meant that large numbers of Adivasi families are encountering formal educational systems for the first time. Many students entering secondary school today are first-generation learners whose parents have had little direct draw upon practical knowledge about admissions, scholarships, examinations, and career opportunities. For many first-generation learners in remote Adivasi villages of Bastar, such networks and sources of guidance are far less readily available. Schooling becomes only one part of the journey; figuring out what comes after

school can be equally challenging.

Over months of spending time in schools and hostels in Bastar during 2023, I repeatedly encountered concern about the future rather than confidence in conversations about what lay ahead. Students spoke about fear, few opportunities, and unclear pathways after school. Educators expressed similar concerns. As one government school teacher put it, "There has been development in Bastar. But the way children are being educated, the city does not provide what they need." School brings students in. It does not necessarily carry them forward.

Education is often imagined as a ladder leading towards mobility. But many students step onto it without knowing where it leads or whether it leads anywhere at all.

"I feel scared when I think about my future," Bunty (name changed), a 16-year-old student in Grade 11, told me. He wanted to prepare for competitive examinations after school but worried that studying would leave him with little time to earn money. If family resources ran out, he would have to stop studying and find work. "I try to suppress these thoughts," he added quietly. "I guess I will find some work."

Across Bastar, Adivasi students frequently spoke of government jobs as teachers, police personnel, or administrative workers. These are not simply career preferences. In a region marked by fragile livelihoods and limited private-sector opportunities, they represent some of the few imaginable forms of long-term stability. Such positions remain intensely competitive.

Over time, many students adjust their ambitions as they come to recognize what is realistically within reach. As Neeru, a 15-year-old student, explained, "I want to join the army or police, though I will become a teacher … my family wants me to do so." Another student, Pihu, described feeling doubtful that years of preparation would lead anywhere. What changes is not only what students aim for, but what they allow themselves to hope for.

The burden of aspiration

"Bastar 2.0" places considerable emphasis on infrastructure, connectivity, and economic growth. These transformations matter. But roads, tourism projects, and investment plans do not automatically create sustainable futures for young people moving through expanding educational systems. While more students are

remaining in school, opportunities beyond it remain scarce. Families continue investing heavily in education despite having few assurances about what it will ultimately deliver.

What is emerging is not simply a gap between education and employment, but a transfer of risk onto Adivasi youth themselves. Schooling expands, but the responsibility of turning education into a livelihood is pushed onto students and their families. Young people are expected to navigate complex and competitive pathways with little guidance and few guarantees. The burden of uncertainty is no longer carried primarily by institutions; it is absorbed by those moving through them.

This contradiction lies beneath the language of "mainstreaming". State institutions encourage young people to become disciplined, aspirational, and future-oriented, even while the opportunities available to them remain narrow and precarious. Young people are asked to continuously prepare themselves for futures that may never fully arrive.

There is also a spatial dimension to this mismatch. Development imagines Bastar moving steadily towards greater integration with urban India. For many young Adivasis, this movement remains uneven. They study in towns, yet remain tied to home villages where agricultural work, wage labour, and family responsibilities continue to shape everyday life.

In the hostels I spent time in, this tension was visible repeatedly. Students spoke of preparing for examination-driven futures while remaining embedded in households where time was organized around work, obligation, and economic survival. Schooling raises expectations. However, it does not release many young people from the circumstances that continue to govern their lives. It also raises a more direct question: what kinds of work are actually becoming available, and to whom?

Beyond the language of development

This is not an argument against investment in infrastructure, education, or public services. Bastar has long required greater public investment, and the decline in Maoist violence has created an important opening. But development, on its own, cannot carry the expectations now being placed upon it.

For many young people in Bastar, the challenge no longer lies in reaching school. It lies in figuring out what comes after it higher education, employment, or the opportunities available beyond their immediate surroundings. If "Bastar 2.0" is to move beyond a narrative of visible transformation, it will have to confront these less visible transitions and ask what expanding institutions actually make possible and for whom.

Bastar may well be at a turning point. Yet turning points are defined not only by what ends, but also by what emerges in its place. Roads can connect places, and tourism can bring visibility. They do not create pathways. In contemporary Bastar, education is generating aspiration faster than it is creating viable futures, leaving Adivasi youth to carry the risks of a system that promises movement without guaranteeing arrival.

जगत पाठक पत्रकारिता संस्थान, भोपाल

जगत पाठक पत्रकारिता संस्थान वर्ष 1998 से सतत् रूप से संचालित हो रहा है। इस संस्थान से अध्ययन कर छात्र-छात्राएं प्रिंट व इलैक्ट्रॉनिक मीडिया में अच्छे पदों पर पदस्थ हैं। साथ ही साथ शासकीय पद पर आसीन होकर इस संस्थान को गौरवान्वित कर रहे हैं।

: विषय :

मास्टर ऑफ आर्ट जर्नलिज्म (2 वर्ष)

बी.एस.सी. मास कम्यूनिकेशन (3 वर्ष)

प्रवेश प्रारंभ

संपर्क सूत्र

विजया पाठक (संचालक) - 9826064596

अर्चना शर्मा - 9754199671 संतोष गुप्ता - 9755618891

कार्यालय - कार्पोरेट कार्यालय - एफ 116/17, शिवाजी नगर, भोपाल, म.प्र.

संस्थान - 28, सुरभि विहार कालोनी, कालीबाड़ी, बी.डी.ए. रोड, भेल, भोपाल, म.प्र.

सुघर छत्तीसगढ़
श्री नरेन्द्र मोदी
माननीय प्रधानमंत्री
श्री विष्णु देव साय
माननीय मुख्यमंत्री, छत्तीसगढ़
एक महा अभियान,
जो घर-घर तक पहुंचाएगा
सुशासन का लाभ
नियद नेल्ला नार
मॉडल का राज्यव्यापी विस्तार
23 जिलों में 31 जनकल्याणकारी योजनाओं के
संतृप्तिकरण का व्यापक कार्यक्रम
हमसे जुड़ने के लिए
QR स्कैन करें
R.O. No. 13772/26
छत्तीसगढ़ जनसंपर्क
सुशासन से समृद्धि की ओर
ChhattisgarhCMO
DPRChhattisgarh
www.dprcg.gov.in

छत्तीसगढ़ शासन

सरल सुगम सशक्त

श्री नरेन्द्र मोदी
माननीय प्रधानमंत्री

प्रशासनिक सुधार

- सुशासन एवं अभिसरण विभाग की स्थापना
- ई-गवर्नेंस को बढ़ावा, ई-ऑफिस प्रणाली
- अटल डैशबोर्ड
- मुख्यमंत्री सुशासन फेलोशिप
- सीएम हेल्पलाइन 1076

राजस्व एवं पंजीयन सुधार

- प्रदेश में **119** पंजीयन कार्यालय बन रहे स्मार्ट
- भूमि विवाद रोकने जियो-रेफरेंसिंग
- **10** क्रांतियों और सुगम एप से आसान हुई रजिस्ट्री प्रक्रिया
- वनाधिकार पट्टा वितरण से मिला मालिकाना हक

ईज ऑफ डूइंग बिजनेस

- **जन विश्वास 2.0** लागू करने वाला पहला राज्य
- **इन्वेस्ट छत्तीसगढ़ पोर्टल** के वन-क्लिक सिंगल विंडो सिस्टम से त्वरित स्वीकृति
- **स्टार्टअप एवं नवाचार** नीति 2025-30 लागू
- भारत सरकार द्वारा **LEADS 2025** में लैंडलॉक्ड राज्यों में हाई परफॉर्मर की मान्यता

सेवाओं का डिजिटलीकरण

- **6,000+** पंचायतों में अटल पंचायत डिजिटल सुविधा केंद्र
- सेवा सेतु से **570** से अधिक सेवाएं एक ही डिजिटल प्लेटफॉर्म पर
- अस्थायी बिजली कनेक्शन के लिए ऑनलाइन सुगम प्रक्रिया

भ्रष्टाचार नियंत्रण एवं पारदर्शिता

- जेम पोर्टल से सरकारी खरीदी
- भर्ती परीक्षाओं में पारदर्शिता और नकल के विरुद्ध कठोर कानून
- खनिज ट्रांजिट पास की प्रक्रिया हुई पारदर्शी
- लकड़ी व खनिज ब्लॉक की पारदर्शी ई-नीलामी

श्री विष्णु देव साय
माननीय मुख्यमंत्री, छत्तीसगढ़

प्रशासनिक सुधार और नवाचार

प्रगति और समृद्धि का सपना हो रहा साकार

R.O. No. 13772/26

छत्तीसगढ़ जनसंपर्क
Visit us : /ChhattisgarhCMO /DPRChhattisgarh www.dprcg.gov.in